जल नियामक आयोग

जलक्षेत्र 'सुधार' कार्यक्रमों की प्रक्रिया, विश्लेषण और समुदायों पर प्रभाव

प्रयास

जल नियामक आयोग
जलक्षेत्र 'सुधार' कार्यक्रमों की प्रक्रिया, विश्लेषण और समुदायों पर प्रभाव

Jal Niyamak Ayog
Jalkshetra 'Sudhar' Karyakramon Ki Prakriya, Vishleshan Aur Samudayon Par Prabhav (Hindi)

लेखकगण :
डॉ. सुबोध वागळे, श्रीपाद धर्माधिकारी, सचिन वारघड़े, कल्पना दीक्षित, रेहमत, गौरव द्विवेदी

संपादन :
रेहमत, सचिन वारघड़े

'मंथन अध्ययन केन्द्र' का सहयोग :
'मंथन अध्ययन केन्द्र' पानी के निजीकरण विरोधी अभियान ने शामिल रहा है। मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश की गतिविधियाँ 'प्रयास' और 'मंथन' ने साथ मिलकर की है। इस पुस्तिका की विषयवस्तु और संपादन में भी मंथन का पूरा सहयोग रहा है।

संपर्क :
प्रयास
बी–21, बी.के. एवेन्यू, सर्वे 87/10 – अ, न्यू डी.पी. रोड,
आज़ाद नगर, कोथरूड़, पुणे (महाराष्ट्र) 410 038
दूरभाष : 020-25388273, 65615594
ईमैल : reli@prayaspune.org
वेब : www.prayaspune.org

प्रथम संस्करण – मार्च 2009

प्रतियाँ – 1000

सहयोग राशि – 15 रूपए
(केवल निजी वितरण के लिए)

मुद्रक :
यशोदा मुद्रणालय,
१६३, शास्त्रीनगर, कोथरुड, पुणे - ३८

इस पुस्तिका पर कोई कॉपीराईट नहीं है। जनहित में इसकी सामग्री का उपयोग किया जा सकता है, लेकिन स्रोत का उल्लेख करने पर प्रसन्नता होगी।

जल नियामक आयोग

जलक्षेत्र 'सुधार' कार्यक्रमों की प्रक्रिया, विश्लेषण और समुदायों पर प्रभाव

प्रयास

स्वास्थ्य, ऊर्जा, शिक्षा और पालकत्व इस विषय में विशेष प्रयत्न

संसाधन और जीविका समूह, पुणे

विषय सूची

भूमिका 1

भाग 1 ढाँचागत बदलाव

1. भारत में जलक्षेत्र के निजीकरण एवं बाजारीकरण के प्रभाव 3
2. जलक्षेत्र सुधार एवं ढाँचागत बदलाव की समीक्षा 10
3. नियामक व्यवस्था का परिचय 19

भाग 2 उत्तर प्रदेश में पानी हुआ पराया

4. उत्तर प्रदेश जल प्रबंधन एवं नियामक आयोग अधिनियम: पानी के बाजारीकरण पर कानूनी मोहर 21
5. उत्तर प्रदेश की कार्यशाला का कार्यवृत्त 33

भाग 3 मध्यप्रदेश में बिकने को तैयार है पानी

6. मध्यप्रदेश में प्रस्तावित जल नियामक आयोग के संभावित प्रभाव 41
7. म०प्र० शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण उन्नयन परियोजना 44
8. म०प्र० के प्रस्तावित जल नियामक आयोग के प्रभावों पर कार्यशाला एवं आमसभा 49

भाग 4 महाराष्ट्र में पानी का बाजार

9. महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के गठन की प्रक्रिया एवं स्वरूप 57
10. महाराष्ट्र जल नियामक आयोग के अनुभव और सीख 62

भूमिका

प्रस्तुत संकलन **'मंथन'** एवं **'प्रयास'** के साथियों की एक साझा कोशिश है। इसमें मंथन एवं प्रयास द्वारा आयोजित कार्यशालाओं में प्रस्तुत किये गये विश्लेषणों और अध्ययनों का समावेश किया गया है। मूलतः इस संकलन में भोपाल (जून 2008) और लखनऊ (दिसंबर 2008) में आयोजित कार्यशालाओं में किये गये प्रस्तुतीकरण और वक्तव्य शामिल हैं। ये कार्यशालाएँ विभिन्न राज्यों के जल क्षेत्र में विश्व बैंक द्वारा प्रायोजित सुधार कार्यक्रमों और उनके अंतर्गत बनाये गये या प्रस्तावित जल नियामक आयोग जैसे कानूनों को खास ध्यान में रख कर आयोजित की गई थी। चूँकि इस संकलन में शामिल सामग्री अलग.अलग समय प्रस्तुत की गई थह इसलिए पाठकों को कुछ स्थानों पर दोहराव दिखाई देगा।

इस संकलन का मुख्य उद्देश्य उन समूहों और साथियों तक तकनीकी और कानूनी जानकारियाँ पहुँचाना है जो पानी के मुद्दे पर भिन्न स्तरों पर काम कर रहे हैं। **'मध्य प्रदेश जल क्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'** जैसी विश्व बैंक के कर्ज से संचालित परियोजनाओं में जल नियामक आयोग के गठन की शर्त रखी गई है। विश्व बैंक के कर्ज से ऐसी ही परियोजनाएँ महाराष्ट्रए उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में भी जारी है और वहाँ पर तो जल नियामक आयोग बनाए भी चुके है। इन सुधार कार्यक्रमों और नियामक आयोग बनाने के पीछे सबसे बड़ी धारणा यह है कि जलप्रदाय व्यवस्था को आर्थिक रूप से सक्षम बनाया जाना चाहिये और इसके लिए उपभोक्ताओं से पूरी लागत वसूली जानी चाहिये। इस तरह पानी के व्यापार को बाजार व्यवस्था के अंतर्गत लाया जा रहा है और जो सबसे अधिक दाम दे सके उसे पानी

की उपलब्धता सुनिश्चित की जाएगी। ऐसी व्यवस्था को चलाने के लिये नियमों और कानूनों में भारी फेरबदल की आवश्यकता है और उसी का परिणाम है यह जल नियामक आयोग कानून।

जल नियामक कानून को बनाते समय न तो गरीबोंए किसानों और वंचित समुदायों को ध्यान में रखा जाता है और न ही इनसे राय लेना जरूरी समझा जाता है। मध्यप्रदेश में मार्च 2006 से जल नियामक आयोग संबंधी कानून का प्रारूप तैयार है लेकिन माँग करने के बावजूद इसे सार्वजनिक नहीं किया जा रहा है।

ऐसे ही विभिन्न राज्यों में चलाये जा रहे (अ)सुधारवादी कार्यक्रमों और कानूनों की समीक्षाए विश्लेषण और उनके अनुभव प्रस्तुत संकलन में दिये गये है। आशा है यह संकलन विभिन्न समुदायों और वर्गों को स्थायीए समतामूलक और न्यायपूर्ण जलप्रदाय व्यवस्था की और ले जाने में अपना योगदान अवश्य देगा।

●●●

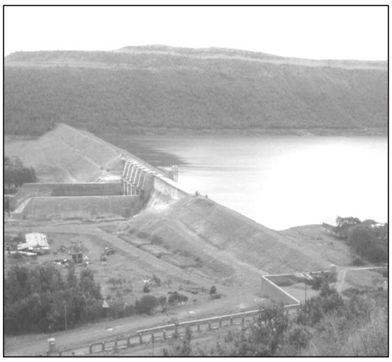

भाग - 1

ढाँचागत बदलाव

कल्याणकारी व्यवस्था जलक्षेत्र में 'आपूर्ति-केन्द्रित' दृष्टिकोण अपनाती रही है। अर्थात् सभी को पानी उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से नीतियाँ-कार्यक्रम-योजनाएँ तय की जाती रही हैं। इसके लिए जलक्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं का निर्माण कर, नये जलस्रोतों को विकसित कर उपलब्ध पानी को अधिकाधिक लोगों तक पहुँचाने की व्यवस्था पर बल दिया जाता रहा है। सेक्टर रिफार्म के तहत अब 'माँग-केंद्रित' दृष्टिकोण हावी है। जिसका तात्पर्य यह है कि जलप्रदाय योजनाओं का आंशिक खर्च उठाने, योजना के क्रियान्वयन में हिस्सेदारी तथा परियोजना के संचालन-संधारण की जिम्मेदारी उठाने की जल उपयोगकर्त्ताओ की सहमति होने पर ही जलप्रदाय योजनाएँ लागू की जाये। इस दृष्टिकोण में सभी लोगों को पानी देने का लक्ष्य न होकर उपलब्ध पानी के प्रबंधन को महत्त्व दिया जाता है।

भाग 1

ढाँचागत बदलाव

1. भारत में जलक्षेत्र के निजीकरण एवं बाजारीकरण के प्रभाव
2. जलक्षेत्र सुधार एवं ढाँचागत बदलाव की समीक्षा
3. नियामक व्यवस्था का परिचय

1

भारत में जलक्षेत्र के निजीकरण एवं बाजारीकरण के प्रभाव

1991 से भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण द्वारा बड़े बदलाव शुरू किए गए। बिजली के क्षेत्र में ये बदलाव प्रारंभ से ही लागू हो गए थे लेकिन जल क्षेत्र में ये अभी प्रारंभ हुए है। बगैर ठोस सोच-विचार के, जल्दबाजी में किए गए उदारीकरण और निजीकरण के कारण आज बिजली क्षेत्र संकट में है। सुधार की प्रक्रिया मानव निर्मित आपदा सिद्ध हुई है। बिजली के दाम और बिजली संकट दोनों ही बढ़े हैं और वर्षों के लिए देश पर महँगे समझौतों का बोझ लाद दिया गया है। यह सब अब अधिकृत रूप से भी स्वीकार कर लिया गया है। इस प्रक्रिया से सीख लेने के बजाय इसी प्रकार की उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण की नीति अब जल क्षेत्र में भी दोहराई जा रही है।

भारत में ''सुधार'' दो प्रकार से हो रहा है। पहले तरीके में जल सेवाओं का सीधा निजीकरण किया जा रहा है चाहे वह ''बीओटी'' के माध्यम से हो या फिर प्रबंधन अनुबंध के माध्यम से। यह तरीका औद्योगिक और शहरी जलप्रदाय में अपनाया जा रहा है। 'सुधार' का दूसरा तरीका, ज्यादा खतरनाक है और पूरे जल क्षेत्र में इसके दूरगामी परिणाम होंगें।

सीधा निजीकरण

इसमें बीओटी (बनाओ, चलाओ और हस्तांतरित करो) परियोजनाएँ, कंसेशन अनुबंध, प्रबंधन अनुबंध, निजी पनबिजली परियोजनाएँ आदि शामिल हैं। इसी तरह की कई परियोजनाएँ या तो जारी है या फिर प्रक्रिया में है। जैसे छत्तीसगढ़ की शिवनाथ नदी, तमिलनाडु की तिरूपुर परियोजना, मुंबई में के॰-ईस्ट वार्ड का प्रस्तावित निजी प्रबंधन अनुबंध आदि।

हिमाचल के अलियान दुहांगन, उत्तराखण्ड के विष्णु प्रयाग और मध्यप्रदेश की महेश्वर जल विद्युत परियोजना की तरह अनेक निजी पनबिजली परियोजनाएँ या तो निर्मित हो चुकी है या फिर निर्माणाधीन है। अलियान दुहांगन परियोजना को अंतर्राष्ट्रीय वित्त निगम (IFC) ने कर्ज दिया है। निजी जल विद्युत परियोजनाओं के मामले में कंपनियों को नदियों पर नियंत्रण का अधिकार दे दिया जाता है जिसका विपरीत प्रभाव निचवास (Down-stream) में रहने वाले समुदायों पर पड़ता है।

दिल्ली जल निगम का प्रस्तावित निजीकरण

एक सार्वजनिक उद्यम दिल्ली जल निगम का **"दिल्ली जलप्रदाय एवं मल निकास परियोजना''** के नाम से विश्व बैंक के कर्ज की शर्तों के तहत निजीकरण किया जाने वाला था। इस परियोजना हेतु विश्व बैंक ने 14 करोड़ डॉलर का कर्ज देने के पूर्व सन् 2002 में दिल्ली जल बोर्ड के सुधार एवं पुनर्रचना के अध्ययन हेतु 25 लाख डॉलर की सहायता दी थी। यह कार्य विश्व बैंक की चहेती सलाहकारी फर्म प्राईस वाटरहाउस कूपर्स (PWC) को दिया गया था। सलाहकार फर्म का चयन संदेहास्पद तरीके से किया गया था, जिसका खुलासा **'परिवर्तन'** (दिल्ली) द्वारा किया गया। दिल्ली जल बोर्ड के सुधार के प्रमुख बिन्दु निम्न थे -

- दिल्ली जल बोर्ड के 21 झोनों का जलप्रदाय प्रबंधन निजी कंपिनयों को सौंपा जाना था जिनमें से 2 झोन के टेण्डर मार्च 2005 में जारी किए गए थे।
- दिल्ली जल बोर्ड के कर्मचारियों का कंपनी के लिए काम करना।
- अत्यधिक प्रबंधन फीस (5 करोड़ रुपए/कंपनी/वर्ष) के कारण खर्च में बढ़ौत्तरी और खर्च में दिल्ली जल बोर्ड के नियंत्रण की समाप्ति।
- खर्चों में बढ़ौत्तरी की पूर्ति के लिए तत्कालीन जल दरों में 6 गुना वृद्धि। मध्यमवर्गीय परिवारों के लिए जलदर 1200 रुपए/माह और बस्तियों के लिए 350 रुपए/माह।
- हालांकि जलप्रदाय प्रबंधन कंपनी करती लेकिन प्रत्येक झोन में जलप्रदाय की जिम्मेदारी दिल्ली जल बोर्ड की ही रहती।
- कंपनी को निश्चित लक्ष्य प्राप्त करने के बदले बोनस दिया जाना था जबकि अध्ययन बताते है कि वे लक्ष्य ही बोगस थे।
- दिल्ली जल बोर्ड और कंपनी के मध्य हुए समझौते के अनुसार कंपनी को शिकायत निवारण हेतु 20 दिन का समय दिया गया था जबकि वर्तमान में यह समय 1 से 3 दिन है।
- पानी की गुणवत्ता में सुधार नहीं। कंपनी भी वही प्रक्रिया और उपकरणों का इस्तेमाल करने वाली थी जो दिल्ली जल बोर्ड करता है।
- गरीबों और वंचितों को मुफ्त अथवा रियायती दरों पर पानी नहीं।
- कंपनी की जवाबदेही न के बराबर।

के॰-ईस्ट वार्ड (मुंबई) का प्रस्तावित जल वितरण निजीकरण

के॰-ईस्ट वार्ड (मुंबई) में पानी के निजीकरण की प्रक्रिया जनवरी 2006 में उस समय शुरू हुई जब विश्व बैंक ने एक फ्रांसीसी सलाहकार फर्म 'कस्टालिया' को वार्ड में पानी के निजीकरण की प्रयोगात्मक योजना तैयार करने को कहा। विश्व बैंक ने तीसरी दुनिया के देशों में निजीकरण को बढ़ावा देने वाली अपनी संस्था 'पब्लिक प्रायवेट इन्फ्रास्ट्रक्चर एडवायजरी फेसिलिटी' (पीपीआईएएफ) के माध्यम से

6,92,500 डॉलर उपलब्ध करवाए। इस वार्ड की जनसंख्या 10 लाख है और जलप्रदाय राजस्व की दृष्टि से यह वार्ड पहले से ही फायदे वाला है। सफल क्रियांवयन पर इस प्रयोग का विस्तार पूरे मुंबई शहर में किया जाना था।

जब निजीकरण के खिलाफ विरोध बढ़ा तो बृहन्न मुंबई नगरपालिक निगम ने यह दावा किया कि उसने कस्टालिया को निजीकरण के साथ अन्य सारे विकल्प सुझाने को कहा है। हालांकि कस्टालिया ने संबंधित पक्षों (स्टेक होल्डर) की दूसरी मीटिंग में जो विकल्प सुझाए उनमें निजीकरण को प्राथमिकता दी गई थी। लेकिन **"मुंबई पानी"** जैसे मुंबई में कार्यरत् निजीकरण विरोधी समूहों के कारण अब यह परियोजना रोक दी गई।

स्वजलधारा

ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर क्रियांवित स्वजलधारा परियोजना विश्व बैंक द्वारा वित्तपोषित है। गाँवों में साफ और सुरक्षित पेयजल उपलब्ध करवाने हेतु यह योजना कई राज्यों में जारी है। परियोजना रिपोर्ट और अध्ययन बताते हैं कि इसके लिए संचालन और संधारण की पूर्ण लागत वापसी और ग्रामीणों का मौद्रिक अंशदान जरूरी है। जो लोग यह कीमत अदा नहीं कर सकते वे इस योजना से वंचित हो जाते हैं तथा उन्हें अपने संसाधन स्वयं तलाशने होते हैं। रिपोर्ट यह भी बताती है कि इनमें से कुछ योजनाएँ स्थानीय दबंगों और ठेकेदारों ने हथिया ली है और वे लोगों से पैसे वसूल रहे हैं।

सुधार और पुनर्रचना

जल क्षेत्र सुधार और पुनर्रचना ठीक उसी तरह जारी है जैसा बिजली के मामले में हुआ और वास्तव में यह दुनियाभर में होने वाले पानी के निजीकरण की तरह ही है। ये नीतियाँ विश्व बैंक और एशियाई विकास बैंक द्वारा पूरे क्षेत्र को बाजार में तब्दील करने पर जोर देते हुए आगे धकेली जा रही है।

हालांकि देश के जल क्षेत्र में सुधार की जरूरत है लेकिन विश्व बैंक के सुझाए तरीके का अर्थ है जलक्षेत्र का व्यावसायिक गतिविधि में बदलना और जल का सामाजिक प्रतिबद्धता के बजाय एक खरीदी-बेची जाने वाली वस्तु में बदलाव। इनमें हमेशा निम्न बिन्दु शामिल होते हैं -

- विखण्डन (स्रोत, पारेषण और वितरण को अलग करना)
- क्षेत्र को "राजनैतिक हस्तक्षेप" से मुक्त करवाने हेतु एक स्वतंत्र नियामक का गठन
- दरों में अत्यधिक वृद्धि
- पूर्ण लागत वापसी
- सब्सिडी का खात्मा
- पैसा नहीं देने पर सेवा समाप्ति
- कर्मचारियों की छँटनी

- निजी क्षेत्र की भागीदारी या निजी सार्वजनिक भागीदारी
- सर्वाधिक मूल्य उपयोग (highest value use) हेतु बाजार के सिद्धांत के अनुसार पानी का आवंटन।
- इस प्रक्रिया को लगभग हमेशा ही विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक और डीएफआईडी आदि द्वारा आगे धकेला गया।
- नीति निर्धारण, पुनर्रचना प्रक्रिया और यहाँ तक कि कानूनों के प्रारूप भी अत्यधिक महँगे अंतर्राष्ट्रीय सलाहकारों द्वारा बनाए जाते हैं।

हालांकि सुधार को जलक्षेत्र की वर्तमान समस्याओं के संभावित हल की तरह प्रस्तुत किया जाता है लेकिन, इसमें ज्यादातर वित्तीय पक्ष की ही चिंता की जाती है। ये सुधार शायद ही समस्याओं के मूल कारणों के अध्ययन पर आधारित होते हैं। इन अध्ययनों की अनुसंशाएँ पहले से ही तय होती है। इस प्रकार, एक ही तरह के सुधार न केवल देश के कई हिस्सों में सुझाए जाते है बल्कि इन्हीं तरीकों को दुनिया के कई देशों में लागू किया जाता है। वर्तमान में देश के कई राज्यों में विश्व बैंक/एडीबी आदि की शर्तों के तहत सुधार प्रक्रिया विभिन्न चरणों में जारी है।

चूँकि पानी राज्य का विषय है इसलिए सुधार का बड़ा हिस्सा राज्यों के स्तर पर जारी है। केन्द्र सरकार ने भी पानी के निजीकरण और व्यावसायीकरण के बारे में अनेक कदम उठाए गए हैं। जैसे -

- 1991-बिजली क्षेत्र निजीकरण हेतु खोला गया जिससे जलविद्युत का निजीकरण प्रारंभ हुआ।
- 2002-नई जल नीति में निजीकरण को शामिल किया गया।
- 2004-शहरी जलप्रदाय और मलनिकास सुधार में जन-निजी भागीदारी की मार्गदर्शिका तैयार की।
- 2005-जेएनएनयूआरएम और यूआईडीएसएसएमटी जैसी योजनाओं के माध्यम से शहरी जलप्रदाय में निजी क्षेत्र के प्रवेश पर जोर दिया गया। जन-निजी भागीदारी को प्राथमिकता।
- 2006 - बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं हेतु 20% धन उपलब्ध करवाने हेतु भारतीय बुनियादी वित्त निगम लिमिटेड (IIFCL) का गठन किया गया।
- 2008 - परियोजना विकास खर्च का 75% तक वित्त उपलब्ध करवाने हेतु भारतीय बुनियादी परियोजना विकास कोष (IIPDF) का गठन किया गया।

मध्यप्रदेश जल क्षेत्र सुधार

2005 में विश्व बैंक ने मध्यप्रदेश सरकार को 39.6 करोड़ डॉलर का कर्ज दिया है। इस कर्ज से क्षेत्र सुधार की शर्तों के साथ ''मध्यप्रदेश जल क्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'' जारी है। इस परियोजना के मुख्य बिंदु निम्न है -

- जलक्षेत्र का व्यावसायीकरण। पूरे क्षेत्र को बाजार में तब्दील करना।

- पूर्ण लागत वसूली और जल दरों में बढ़ौत्तरी
- सब्सिडी की समाप्ति
- जबरिया नया कानून बनवाया जा रहा है जिसके तहत राज्य जल दर नियामक आयोग का गठन किया जाएगा। इस कानून का प्रारूप तैयार किया जा चुका है।
- राज्य जल संसाधन एजेंसी का गठन
- बड़े पैमाने पर कर्मचारियों की छँटनी
- पहले चरण में 25 छोटी और 1 मध्यम परियोजना का निजीकरण

महाराष्ट्र राज्य जल संसाधन नियमन प्राधिकरण

विश्व बैंक के वित्तपोषण से महाराष्ट्र में सुधार की प्रक्रिया जारी है। ''महाराष्ट्र राज्य जल संसाधन नियमन प्राधिकरण'' का गठन किया जा चुका है और विश्व बैंक के ''सुझावों'' के अनुरूप प्राधिकरण ने अपना कार्य प्रारंभ कर दिया है। नियामक प्राधिकरण का गठन जून 2005 में किया गया लेकिन इसने काम मई 2006 में प्रारंभ किया। दर निर्धारण के अलावा इसका प्रमुख कार्य जल अधिकारों के व्यापार का मानदण्ड तैयार करना है। ये जल अधिकार वार्षिक अथवा मौसमी आधार पर बेचे-खरीदे जा सकते हैं। आयोग द्वारा 2 बड़ी सिंचाई परियोजनाओं समेत 6 परियोजनाओं में जल अधिकार सुनिश्चित करने तथा उसके बाजार का ढाँचा तैयार करने का प्रयास प्रायोगिक तौर पर किया जा रहा है।

प्रभाव

समाज के सभी वर्गों में सुधार के प्रभावों का अनुभव किया जा रहा है। लेकिन, गरीब परिवार और किसान जैसे वंचित समुदाय इससे गंभीर रूप से प्रभावित होंगे। मध्यम वर्ग भी इसे अनुभव करेगा। इसके प्रमुख प्रभाव निम्न हैं -

- अत्यधिक दर वृद्धि के कारण कई लोग तो पीने के पानी का भार भी वहन नहीं कर पाएँगें।
- भुगतान में असमर्थता के कारण सेवा समाप्ति यानी पानी के कनेक्शन काटे जाएँगें।
- जल कनेक्शन काटने का अर्थ है कि या तो लोग कम गुणवत्ता का पानी पीने पर मजबूर होंगें अथवा गंभीर राजनैतिक अशांति पैदा हो सकती है।
- सिंचाई दरों में बढ़ौत्तरी होने से पहले से ही दयनीय कृषि क्षेत्र की दशा और खराब हो जायेगी।
- गरीबों का सहारा हेण्डपम्प, सार्वजनिक नल आदि सुविधाएँ खत्म कर दी जाएगी।
- पैसा देने वाले उपभोक्ताओं के लिए तंत्र में बदलाव किए जाएँगें। जो ऊँची दरों का भुगतान नहीं कर पाएँगें वे या तो सेवा से बाहर कर दिए जाएँगे या फिर हाशिएँ पर धकेल दिए जाएँगें।
- अंतत: जो भुगतान कर सकते हैं उन्हीं के लिए जल संसाधनों को हड़प लिया जाएगा।

- निजी कंपनियों द्वारा भारी मुनाफाखोरी की जाएगी।
- सार्वजनिक संसाधनों से पीढ़ियों से निर्मित बुनियादी ढाँचों को नाममात्र की कीमत में बेच दिया जाएगा।
- भूजल, नदी आदि समुदाय के संसाधनों पर निजी नियंत्रण संभावित
- सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों की भारी छँटनी

उपरोक्त के कारण वित्तीय समस्याओं, गुणवत्ता और मात्रा संबंधी समस्याओं, उचित एवं वहनीय जलप्रदाय, संसाधनों की सुरक्षा और विस्तार जैसी जल क्षेत्र की प्रमुख समस्याओं के हल की संभावना अत्यंत क्षीण है।

"सुधार" क्यों

पिछले कुछ वर्षों में निजीकरण के व्यवहार और इससे संबंधित चर्चाओं में बदलाव आया है। इस संबंध में पहला प्रयास सीधे निजीकरण का था, जिसकी दुनियाभर में कड़ी राजनैतिक प्रतिक्रिया हुई। कई कंपनियों के लिए मुनाफा कमाना आसान नहीं रहा। मुनाफा कमाने के लिए सेवा दरों में भारी वृद्धि करनी होती है जो गरीबों के लिए असहनीय होती है। ऐसे में जलप्रदाय जारी रखने से मुनाफे में कमी होती है और कनेक्शन काटने से सामाजिक अशांति पैदा होने का खतरा रहता है।

राजनैतिक सामाजिक आक्रोश और मुनाफा कमाने में कठिनाईयों का परिणाम "गरीब हितैषी" निजीकरण और सार्वजनिक निजी भागीदारी (जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र निजी क्षेत्र को फायदा पहुँचाने के लिए स्वयं सारे जोखिम उठाता है।) जैसी योजनाओं के रूप में सामने आया। परन्तु, यह पर्याप्त सिद्ध नहीं हुआ और राजैनेतिक आक्रोश के कारण मुनाफा कमाने में परेशानियाँ जारी रही है। इस प्रकार क्षेत्र सुधार या सेक्टर रिफार्म पर जोर दिया गया। इसमें निजी क्षेत्र सीधे परिदृश्य में नहीं होते हैं। अलोकप्रिय और कड़े निर्णय लेने और उन्हें लागू करने की सारी जिम्मेदारी सरकार और सार्वजनिक निकायों की होती है। इसमें वे सारे तरीके शामिल होते हैं जिन्हें ऊपर रेखांकित किया गया है।

इसके पीछे की सोच यह है कि क्षेत्र को पूर्ण रूप से व्यावसायिक बनाने का आरोप और राजनैतिक प्रतिक्रिया सरकार सहेगी और उसके बाद इसे निजी क्षेत्र को सौंप दिया जाएगा। निजी क्षेत्रों को फायदा पहुँचाने का, उन्हें सामाजिक जिम्मेदारी के बोझ और जोखिम से परे करने का आजकल यह रास्ता निकाला गया है। इस प्रकार जल क्षेत्र सुधार को भी भूमण्डलीकरण और निजीकरण के नवउदारवादी एजेण्डे के सीधे और आवश्यक घटक के रूप में देखा जाना चाहिए।

विश्व बैंक "ज्ञानदाता" के रूप में

विश्व बैंक अन्य द्विपक्षीय कर्जदाताओं के साथ मिलकर क्षेत्र निजीकरण एवं व्यावसायीकरण में पैसे देने के अलावा एक और महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है। यह भूमिका "शोध" और "अध्ययन" के माध्यम निजीकरण को सही सिद्ध करने के "ज्ञान" और अन्य सहयोग के रूप में है।

जल क्षेत्र की गहन और लंबे समय से चली आ रही समस्याओं के ''हल'' के रूप में निजीकरण को देश पर लादा जा रहा है। इस नीति निर्धारण को ''हल'' के रूप में प्रदर्शित करवाने के लिए इसे शोध और अध्ययन के निष्कर्षों की तरह प्रदर्शित किया जाता है। इसके लिए विश्व बैंक स्वयं अथवा सलाहकारों के माध्यम से बड़ी संख्या में शोध और अध्ययन करवाता है।

उदाहरणार्थ, विश्व बैंक कुछ अंतर्राष्ट्रीय कर्जदाता एजेंसियों के साथ मिलकर जल एवं स्वच्छता कार्यक्रम (वाटर एण्ड सेनिटेशन प्रोग्राम) संचालित करता है। भारत में भी यह कार्यक्रम अध्ययनों की एक श्रृंखला के साथ सामने आया है जिनमें जल क्षेत्र की समस्याओं जैसे शहरी और ग्रामीण जलप्रदाय, सिंचाई आदि का हल सुझाया गया है।

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि निजीकरण के दुष्परिणामों के ढेर सारे उदाहरणों के बावजूद विश्व बैंक के ऐसे अध्ययन किसी भी क्षेत्र के लिए हमेशा एक जैसा निजीकरण और उदारीकरण का घिसापिटा नुस्खा ही सुझाते हैं। इसे हम मोटे रूप में निजीकरण, निगमीकरण और भूमण्डलीकरण के पुलिंदे का ''बौद्धिक एवं सैद्धांतिक आधार'' कह सकते हैं।

विश्व बैंक की राष्ट्र सहायता रणनीति (CAS) 2005-2008 से स्पष्ट है कि निजीकरण और भूमण्डलीकरण को आगे धकेलने में विश्व बैंक अपनी ज्ञानदाता की भूमिका को कितना महत्व देता है। यह दस्तावेज भारत को इन 3 वर्षों में दिए जाने वाले कर्जों के संबंध में विश्व बैंक की रणनीति और प्राथमिकता निर्धारित करता रहा। विश्व बैंक के कार्यों के संबंध में तीन ''रणनैतिक सिद्धांतों'' में से एक है-''बैंक का लक्ष्य व्यावहारिक, राजनैतिक ज्ञानदाता और उत्पादक की भूमिका का पर्याप्त विस्तार करना है।

●●●

भाग - 2

उत्तर प्रदेश में पानी हुआ पराया

‘सुधार– का एक आवश्यक घटक है प्राकृतिक संसाधनों के निजीकरण में बाधक कानूनों में आमूलचूल बदलाव है। ये बदलाव कर्ज दाता ऐजेंसियों की जरूरत के आधार पर किए जाते हैं। अनेक बार तो ऐसे कानूनों का प्रारूप तैयार करने का ठेका भी विदेशी कंसलटेंसी फर्मों को दे दिया जाता है। नियामक आयोग कानून भी ऐसा ही कानून है जिसे राजनैतिक अथवा जन हस्तक्षेप के परे माना गया है। शायद इसीलिए उत्तरप्रदेश के नियामक कानून में जल अधिकारों का बाजार खड़ा करने तथा किसानों पर भी भारी भरकम जुर्माने की बात कही गई है। लेकिन इस समय सबसे बड़ी जरूरत है इस व्यवस्था को नकारने की और पानी पर समुदाय के अधिकार को अक्षुण्ण रखने की।

भाग 2

उत्तर प्रदेश में पानी हुआ पराया

4. उत्तर प्रदेश जल प्रबंधन एवं नियामक आयोग अधिनियम: पानी के बाजारीकरण पर कानूनी मोहर

5. उत्तर प्रदेश की कार्यशाला का कार्यवृत्त

2

जलक्षेत्र सुधार एवं ढाँचागत बदलाव की समीक्षा

गत दो दशकों से विभिन्न स्तरों पर अखबारों, विचार गोष्ठियों और सभाओं में 'पानी' पर बहस जारी है। विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, एशियाई विकास बैंक, बहुराष्ट्रीय कंपनियों, अनेक देशों की सरकारों, संचार-माध्यमों आदि सभी ने इस मुद्दे को अत्याधिक महत्त्व दिया है। विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और शोध-प्रबंधों में यह विषय छाया रहा है। इसकी वजह दुनिया के कई विकासशील देशों में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों द्वारा प्रायोजित 'सेक्टर रिफार्म' लागू किया जाना रहा हैं। इन परिवर्तनों के संदर्भ में बुनियादी सुविधाओं की कमी और उनके कारणों को समझने की आवश्यकता है।

अस्सी के दशक से प्रारंभ बदलावों के कारण सार्वजनिक क्षेत्र की बड़ी परियोजनाओं को आर्थिक मदद देने की प्रवृत्ति कम होने लगी थी। इस दौरान अंतरार्ष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों ने पूँजी के बल पर विकासशील देशों की बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में मूलभूत परिवर्तन प्रारंभ करवाए। इससे इन देशों की बुनियादी सुविधाओं की पुनर्रचना अथवा ढाँचागत बदलाव अथवा क्षेत्र सुधार की प्रक्रिया तेज हुई। इसके लिए सार्वजनिक क्षेत्रों में संस्थागत बदलाव, विनिवेशीकरण तथा तकनीकी ज्ञान वृद्धि पर बल दिया गया। इस संपूर्ण प्रक्रिया में पूँजी तथा आधुनिक तकनीकी ज्ञान की बड़ी आवश्यकता थी। अत: इन वित्तीय एजेंसियों ने धन के साथ तकनीकी सहयोग और प्रशिक्षण देने के लिए हाथ बढ़ाए। उम्मीद थी कि इससे आर्थिक विकास की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलेगा और लोगों का जीवनस्तर सुधरेगा। अत: अनेक विकासशील देशों ने बाहरी मदद से बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में बड़ी परियोजनाएँ क्रियान्वित की। विश्व बैंक, यू०एस० एड, इंटर-अमेरिकन विकास बैंक, एशियाई विकास बैंक आदि ने इन प्रस्तावित परिवर्तनों के लिए हरसंभव प्रयास किए। ये प्रयास मुख्य रूप से निम्न तीन प्रकार के हैं -

अ) निजीकरण की जमीन तैयार करना

अस्सी के दशक में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र की बुनियादी सुविधाओं की विफलता की समीक्षा प्रारंभ हुई। इन एजेंसियों के विश्लेषण के अनुसार, अनेक विकासशील देशों ने

बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में बड़ी पूँजी लगाई, परंतु ये देश अपेक्षित प्रदर्शन नहीं कर पाए। सार्वजनिक क्षेत्र को बुनियादी सेवाओं की उपलब्धता, उनका स्तर, निरन्तरता, सेवा शुल्क का ढाँचा तथा सेवाओं की विश्वसनीयता आदि कसौटियों पर परखने पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि इन देशों की बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में सुधार की काफी संभावनाएँ थी। इन देशों में अनुदान प्राप्त योजनाओं का लाभ समाज के अपेक्षित वर्गों तक नहीं पहुँचा। जिससे इन देशों की आर्थिक विकास की प्रक्रिया सीमित रही और गरीबी उनमूलन के उद्देश्य को हासिल करने में खास प्रगति नहीं हो पाई। अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों ने इस विफलता के लिए विकासशील देशों के संस्थागत ढाँचे और नीतियों को जिम्मेदार मानते हुए बुनियादी क्षेत्रों के ढाँचागत बदलाव की आवश्यकता जताई। इन एजेंसियों ने निष्कर्ष निकाला कि केंद्रीय तरीके से संचालित और लोगों की जरुरतों को नज़रअंदाज करने वाली योजनाएँ अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकती। बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध करवाने में सार्वजनिक क्षेत्रों का एकाधिकार अनेक समस्याओं की जड़ है। इस स्थिति में 'सुधार' हेतु निजी क्षेत्रों से पूँजी निवेश की अनिवार्यता तथा विकेंद्रीकरण की आवश्यकता प्रतिपादित की गई।

इसका पहला कदम प्रचार साहित्य निर्माण था, जिसके तहत दुनियाभर की जल-स्थिति, जलक्षेत्र की समस्याओं और उन पर उपाय सुझाने वाले दस्तावेज तथा इस क्षेत्र के भविष्य के बारे में ढेरों प्रकाशन किए गए। इनके निष्कर्षों का शासकीय और गैर शासकीय स्तर पर खूब प्रचार किया गया। पानी की कम उपलब्धता का सवाल विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय सम्मलनों का केन्द्रीय विषय बनाया गया। जिनमें बताया जाता है कि जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, आधुनिक कृषि, विलासितापूर्ण जीवनशैली आदि के कारण दुनिया में पानी की जरूरत निरंतर बढ़ रही है, परंतु प्रकृति के जलस्रोत सीमित है। आने वाले वर्षों में पूरी दुनिया को पानी की जबरदस्त तंगी का सामना करना पड़ेगा। इक्कीसवीं सदी में तेल के बजाय पानी की वजह से युद्ध होने की भविष्यवाणी की जा रही है। इस स्थिति को टालने के लिए और पानी की उपलब्धता बढ़ाने हेतु तुरंत कदम उठाने की आवश्यकता पर जोर दिया जाना चाहिए। विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक आदि द्वारा पानी की कमी दूर करने हेतु जलक्षेत्र में ढाँचागत बदलाव कर इसके निजीकरण और बाजारीकरण का विकल्प सामने रखा गया है।

ब) ढाँचागत बदलाव की शुरूआत

अस्सी के दशक से अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों द्वारा सुझाए गए जलक्षेत्र की पुनर्रचना कार्यक्रम से जलक्षेत्र में जनभागीदारी, विकेंद्रीकरण, पारदर्शिता, निजी पूँजी निवेश आदि को प्रोत्साहन दिया जाने लगा। नब्बे के दशक में यह प्रक्रिया तेज हुई। विश्व बैंक जैसी एजेंसियों ने बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में सार्वजनिक परियोजनाओं को कर्ज देने के बजाए निजी पूँजी निवेश पर बल दिया।

इस दौरान जलसंवर्धन तथा जल प्रबंधन में परम्परागत अभियांत्रिक दृष्टिकोण के स्थान पर जलग्रहण क्षेत्र विकास तथा समन्वित जल प्रबंधन जैसे कार्यक्रमों पर बल दिया गया। इसके माध्यम से बड़ी परियोजनाओं पर निर्भरता कम करने का भ्रम पैदा किया गया था। परियोजना क्रियान्वयन में ग्रामीण समुदायों का सक्रिय सहयोग, आपूर्ति के बजाय माँग आधारित दृष्टिकोण, परियोजना के खर्चों में लोगों की सहभागिता आदि कुछ

नए सिद्धांत लागू किए गए। ग्रामीण जल संग्रहण अभियान, स्वजलधारा, जलस्वराज्य परियोजना, जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना, संपूर्ण स्वच्छता अभियान आदि कार्यक्रमों के अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि इन सारी परियोजनाओं में 'सुधार' की अधिकांश बातें शामिल हैं। साथ ही विकासशील देशों को ऋण अथवा परियोजनाओं के लिए निवेश उपलब्ध करवाते समय इन्हीं सिद्धांतों के तहत कार्यवाही करने की शर्तें रखी गई। नब्बे के दशक में दुनियाभर में 'जलक्षेत्र सुधार परियोजनाओं' की बाढ़ सी आ जाना इस प्रक्रिया का हिस्सा रहा है। भारत में सन् 1999 में ग्रामीण जलसंग्रहण कार्यक्रम में प्रायोगिक तौर पर क्षेत्र सुधार परियोजना प्रारंभ की गई। बाद में स्वजलधारा के रूप में देशभर में यह कार्यक्रम चलाया गया। पिछले कुछ वर्षों में इस प्रक्रिया को आगे धकेला गया है।

स) ढाँचागत बदलाव का दौर

किसी भी देश में संस्थागत तथा प्रक्रियागत बदलाव एक लम्बी तथा जटिल प्रक्रिया है। इसके लिए उस देश के प्रचलित कानून तथा नीतियों में परिवर्तन करना जरूरी होता है। इसी को ध्यान में रखते हुए अस्सी के उत्तरार्ध में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों ने विकासशील देशों में नीतिगत परिवर्तन के प्रयास शुरु किए। इन परिवर्तनों की पूर्व तैयारी के रूप में अनेक देशों में जलक्षेत्र की स्थिति का 'मूल्यांकन' करने के लिए वित्तीय सहायता देने का दिखावा किया गया। इस सहायता के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों ने यह अपेक्षा भी की कि हर देश अपनी राष्ट्रीय जलनीति की घोषणा करें। जल क्षेत्र 'मूल्यांकन' के निष्कर्षों को विकासशील देशों की जलनीतियों में शामिल किया गया और जलक्षेत्र के 'सुधार' का आधार यही अध्ययन बने। इस प्रक्रिया का परिणाम यह हुआ कि अनेक देशों ने पहली बार अपनी राष्ट्रीय अथवा राज्यस्तरीय जलनीतियाँ बनाई। कई विकासशील देशों ने अपने जल संबंधी कानूनों की समीक्षा कर उसमें बदलाव किए।

इन कानूनी बदलावों के तहत देश में नए संस्थागत ढाँचें बनाए गए। नए कानून और नीतियों में सेवाओं के विकेंद्रीकरण की आवश्यकता प्रतिपादित की गई। जलक्षेत्र को भी इसी प्रकार बदला गया। इन परिवर्तनों से न केवल विकासशील देशों की अर्थव्यवस्थाएं प्रभावित हो रही है बल्कि अनेक राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तन भी महसूस किए जा रहे हैं। समाजिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों पर इन परिवर्तनों के गंभीर तथा दूरगामी असर हुए हैं।

ढाँचागत बदलाव : पैरोकारों के तर्क

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों द्वारा जलक्षेत्र की पुनर्रचना के तहत मौजूदा ढाँचे में परिवर्तन का उद्देश्य विकासशील देशों में आर्थिक विकास की गति तेज करने का बताया था। इन एजेंसियों के अनुसार राज्य द्वारा निजी क्षेत्र पर लगाए गए अनुचित बंधनों से निजी क्षेत्र की वृद्धि बाधित होती है और उसका प्रभाव आर्थिक विकास के लक्ष्य पर (अर्थात् समाज पर) पड़ता है। बुनियादी सुविधाओं में अगर निजी क्षेत्र की हिस्सेदारी को बढ़ावा दिया जाए तो अधिकाधिक लोगों को स्तरीय सुविधाएँ देने का लक्ष्य पूरा होगा। सेवाओं में सार्वजनिक क्षेत्र के एकाधिकारवाद के बजाय मुक्त स्पर्द्धा का तरीका अपनाने से उसका लाभ ग्राहकों को होगा।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों की यह विचारधारा बाजार की बढ़ती भूमिका और निजीकरण की नीति को प्रोत्साहित करने वाली है। आज इन एजेंसियों की विचारधारा के पक्ष में विकसित राष्ट्रों की सरकारें और बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भी हैं। केवल इतना ही नहीं, अनेक विकासशील देशों की सरकारें, नीति निर्माता, अर्थशास्त्रीगण तथा स्थापित संस्थाएँ भी इस मत की पक्षधर हो गई है कि आर्थिक सुधार की नीतियों को अपनाने के अलावा अब अन्य कोई विकल्प शेष नहीं है। इसका कारण आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्टि से कमजोर, विकासशील राष्ट्रों का हितसंरक्षण बताया जाता है। जलक्षेत्र की पुनर्रचना में निम्नलिखित मुद्दों पर क्रियांवयन आवश्यक बताया गया है -

1. पानी एक बाजारी जिंस

जलक्षेत्र की पुनर्रचना के तहत पानी के प्रति दृष्टिकोण में 'बुनियादी बदलाव' की जरूरत पर बल दिया गया है। मनुष्य के लिए पानी की अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए, दुनिया में पानी ही एक ऐसा संसाधन माना जाता रहा है जिस पर किसी का भी 'स्वामित्व' नहीं रहा। हालांकि उसके उपयोग में तत्कालीन समाजव्यवस्था की विषमता का प्रभाव दिखाई देता है। पूँजीवाद के उदय से और औपनिवेशिक साम्राज्यवाद के दौरान अन्य प्राकृतिक संसाधनों के साथ पानी भी राज्य के नियंत्रण में आ गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी भारत में पानी पर राज्य का अधिकार कायम रहा। परंतु, कल्याणकारी व्यवस्था में सभी नागरिकों को पानी देने की जिम्मेदारी राज्य की थी। इसलिए पीने और आर्थिक गतिविधियों के लिए पानी की आपूर्ति और इसके लिए आवश्यक निवेश सरकार का कर्तव्य माना जाता था।

भारत में उदारीकरण-भूमंडलीकरण-निजीकरण की नीतियाँ स्वीकार किए जाने के बाद राज्य की भूमिका में आमूलचूल बदलाव हुए। आर्थिक विकास को बढ़ावा देने हेतु राज्य की सर्वव्यापी भूमिका को सीमित करके बाजार व्यवस्था के अनुकूल नीतियों का निर्माण किया जाने लगा। जलक्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रह पाया।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के मतानुसार पानी को आर्थिक वस्तु के रूप में देखना जरूरी है, क्योंकि इसे केवल संसाधन मानने से इसके नियोजन और वितरण में कई प्रकार की समस्याएँ पैदा हुईं है। इसे अन्य वस्तुओं के समान ही एक **'वस्तु'** मानने से बाजार के माध्यम से इसका व्यापार अधिक कुशल तरीके से होगा। बाजार का 'माँग और आपूर्ति' का सिद्धांत पानी पर भी लागू होता है। आज इसकी आपूर्ति कम हो गयी है, अत: बाजार के सिद्धांत के अनुसार इसका सावधानीपूर्वक प्रबंधन जरूरी है। इसके लिए पानी का मालिकाना हक कायम कर उसके व्यापार की अनुमति देना आवश्यक है। पानी की खरीदी-बिक्री शुरू होने से बाजार के नियमानुसार इसकी माँग और आपूर्ति का संतुलन बना रहेगा। साथ ही, पानी कीमती होने से उसके उपयोग में सावधानी बरती जाएगी और अर्थव्यवस्था में सुधार होगा।

उद्योग, कृषि, घरेलू आदि उपभोक्ताओं के लिए जल उपयोग की सीमा निर्धारित करने और जल व्यवस्था को मुक्त तथा जवाबदेह बनाए बिना पानी का सफल नियोजन संभव नहीं होगा। जब लोगों को पानी के इस्तेमाल की सीमा समझ में आएगी तभी पूरी क्षमता से पानी का उपयोग होगा। अगर बचाए गए पानी का आर्थिक विनिमय संभव हुआ तो लोगों को पानी बचाने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय

वित्तीय एजेंसियों द्वारा पानी की अनौपचारिक व्यवस्था के बजाय वैधानिक और संस्थागत व्यवस्था की तरफदारी की गई है।

आज तक जलक्षेत्र में 'आपूर्ति-केन्द्रित' दृष्टिकोण अपनाया जाता रहा है। अर्थात सभी को पानी उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से नीतियाँ-कार्यक्रम-योजनाएँ तय की जाती हैं। जलक्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं का निर्माण करके पानी के नये स्रोतों को विकसित कर और उस पानी को अधिकाधिक लोगों तक पहुँचाने की व्यवस्था आदि पर बल दिया जाता रहा है। अब उसके स्थान पर 'माँग-केंद्रित' दृष्टिकोण पर जोर दिया जा रहा है। माँग-केन्द्रित दृष्टिकोण से तात्पर्य यह है कि पानी का इस्तेमाल करने वालों की जलप्रदाय योजनाओं का आंशिक खर्च उठाने, योजना के क्रियान्वयन में हिस्सेदारी तथा परियोजना के संचालन-संधारण की जिम्मेदारी उठाने की तैयारी होने पर ही जलप्रदाय की योजना लागू की जाये। इस दृष्टिकोण के अनुसार सभी लोगों को पानी की सुविधा देने का लक्ष्य न रखकर, उपलब्ध पानी के उचित प्रबंधन को महत्त्व दिया जाता है।

2. लागत वापसी

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के अनुसार पानी की फिजूलखर्ची का प्रमुख कारण है कि लोगों को यह लगभग मुफ्त के भाव उपलब्ध करवाया जाता है। इसलिए मुफ्त में पानी की आपूर्ति को लोग अपना अधिकार समझते हैं। पानी की फिजूलखर्ची पर रोक लगाने का तरीका यह है कि पानी की दरें लागत खर्च वापसी के हिसाब से तय की जाएँ। संचालन और संधारण खर्च के साथ निजी निवेश पर सुनिश्चित लाभ भी प्राप्त होना चाहिए। गरीबों को मुफ्त में पानी देने की दृष्टि से दी गई सब्सिडी से संपन्न समूहों को ही सस्ते में पानी मिलता है। गरीबों को कम कीमत में पानी देना चाहिए, मुफ्त में नहीं। गरीब लोग तो पानी की कीमत चुकाना चाहते हैं, परंतु उनसे जलकर वसूल नहीं किया जाता। जब लोगों को पानी की पूरी कीमत चुकानी पड़ेगी तो इसकी फिजूलखर्ची रूकेगी तथा पानी की बचत का लक्ष्य अपने आप हासिल हो जाएगा।

3. राज्य की भूमिका में बदलाव

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के मतानुसार बुनियादी सुविधाओं की समस्याओं की जड़ राज्य की सार्वजनिक भूमिका है। राज्य के पास बुनियादी सुविधाओं के स्वामित्व से लेकर उन सुविधाओं संबधी नीति तय करना, उन पर अमल करना तथा इस क्षेत्र का नियमन करना आदि सारे अधिकार हैं। इससे सत्ता का केंद्रीकरण और नौकरशाहीकरण हुआ है तथा सार्वजनिक क्षेत्र का कार्य अपारदर्शी बना है। अपारदर्शी व्यवहार के कारण निहित स्वार्थी समूहों के लिये उन पर प्रभाव डालना संभव हुआ और सार्वजनिक सुविध ााओं संबंधी नीति का विपरीत परिणाम हुआ। प्रशासकीय, आर्थिक हितों के आधार पर निर्णय लेने के बजाय राजनीतिक लाभ की दृष्टि से निर्णय लिए जाने लगे। इन सबके कारण सेवा के स्तर में गिरावट आई, भ्रष्टाचार को बल मिला, संसाधनों की बर्बादी और उनका गलत इस्तेमाल होने लगा और विभिन्न विभागों का घाटा बढ़ा। इसके हल के रूप में राज्य की भूमिका में बदलाव की आवश्यकता प्रतिपादित की गई जिसमें मुख्यत: तीन बातों का समावेश है-

(अ) राज्य द्वारा बुनियादी क्षेत्रों की व्यापक नीतियाँ प्रमुखता से तय की जाएँ तथा महत्त्वपूर्ण निर्णय और नियमन के लिए 'स्वायत्त नियामक तंत्र' स्थापित किए जाएँ।

(ब) जलप्रदाय सेवा, उसके प्रबंधन और प्रशासन आदि की जिम्मेदारी अलग सेवा प्रदाताओं को सौंपी जाए। इन सेवा प्रदाताओं का नियमन स्वायत्त नियामक तंत्र द्वारा किया जाए।

(स) जलक्षेत्र का प्रबंधन सिर्फ सरकारी तंत्र द्वारा करने के बजाय, उसमें लोगों की हिस्सेदारी बढ़ाई जाए।

संक्षेप में राज्य सेवा प्रदाता के बजाय अब 'फैसिलिटेटर' या सहायक की भूमिका निभाएगा। 'स्वायत्त नियामक तंत्र' की स्थापना राज्य से, विशेषकर सरकारी तंत्र से, अलग की जाएँगी। नियामक तंत्र और उसमें कार्यरत लोगों पर सरकारी विभागों का कोई कानूनी अधिकार नहीं होगा। संबंधित क्षेत्र के विशेषज्ञ, अधिकारी और व्यावसायिक उसके सदस्य होंगें। इस प्रकार ये तंत्र मुख्यत: प्रशासकीय-आर्थिक मामलों पर विचार कर, दीर्घकालीन हित को ध्यान में रखकर निर्णय करेंगे। एक ओर यह तंत्र सरकारी और गैर सरकारी लोगों पर अंकुश रखेंगे तथा दूसरी ओर निजी कंपनियों के कारोबार पर नियंत्रण रख कर ग्राहकों के अधिकारों का संरक्षण करेंगे। नियामक तंत्र द्वारा निर्णय प्रक्रिया में सरकारी दृष्टिकोण के बजाय आर्थिक, प्रशासकीय और वित्तीय दृष्टिकोण बढ़ाया जाएगा। इससे अनावश्यक सरकारी हस्तक्षेप बंद होगा तथा बुनियादी सुविधाओं की समस्याएँ हल करने में मदद मिलेगी।

4. निजी क्षेत्र की भागीदारी

विकासशील देशों में बुनियादी सुविधाओं के विकास के लिए या तो सार्वजनिक क्षेत्र ने पूँजी निवेश किया है या अन्य देशों या वित्तीय एजेंसियों से कर्ज लेकर धन की कमी को पूरा किया गया है। इसमें पूँजी उपलब्ध ता की मुख्य जिम्मेदारी सार्वजनिक क्षेत्र की रही। अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के मतानुसार गतिशील आर्थिक वृद्धि के लिए बुनियादी सुविधाओं में जितने निवेश की आवश्यकता है वह कई देशों की सरकारों की क्षमता से बाहर है। इसलिए ऐसे देशों को बुनियादी क्षेत्रों के लिए अधिकाधिक निजी निवेश को आकर्षित कर आर्थिक निवेश, प्रबंधन, तकनीकी-सेवा, परामर्शी ठेकों आदि के माध्यम से बहुराष्ट्रीय कंपनियों से लेकर स्थानीय ठेकेदारों तक निजी क्षेत्र की हिस्सेदारी की सलाह दी जाती है। बुनियादी सेवाओं में सार्वजनिक क्षेत्रों का एकाधिकार समाप्त होकर यह क्षेत्र निजी सेवा प्रदाताओं को चले जाने से सुविधाओं के प्रदाय में प्रतिस्पर्द्धा बढ़ती है। प्रतिस्पर्द्धा के कारण निजी सेवा प्रदाता कीमत कम रखकर सुविधाओं के स्तर में सुधार करते हैं। उपभोक्ताओं को इसका लाभ मिलता है।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के अनुसार अगर निजी निवेशकों को प्रोत्साहन और उचित नियमन के ढाँचे से संतुलन में रखा जाए तो जलक्षेत्र की कार्यक्षमता सुधरेगी, सेवाओं की कीमत उचित होगी, नुकसान रूकेगा और गरीब लोगों को मिलने वाली सुविधाओं में वृद्धि होगी।

5. व्यवस्था का विकेंद्रीकरण

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों की दृष्टि से बुनियादी सुविधाओं के दोषों का महत्त्वपूर्ण कारण प्रक्रियागत त्रुटियाँ है। इन त्रुटियों को दूर करने का प्रमुख रास्ता है-सेवाओं का विकेंद्रीकरण। इस विचार के तहत जलक्षेत्र में नियोजन से लेकर क्रियांवयन और संचालन-संधारण तक सभी स्तरों पर हितग्राहियों और हितसंबंधियों को हिस्सेदार बनाना आवश्यक है। इससे केंद्रीकृत कार्य प्रणाली की त्रुटियाँ दूर कर लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में लिया जाएगा। लोगों की हिस्सेदारी से उनमें अपनत्व निर्माण होगा और जलक्षेत्र के प्रबंधन में मदद मिलेगी। लोगों का सक्रिय सहयोग मिलने पर पानी का प्रबंधन धीरे-धीरे उपयोगकर्ताओं को सौंपा जाएँ।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों द्वारा सुझाए गए पुनर्रचना के ढाँचे और विचारधारा की दुनियाभर में गंभीर समीक्षा हो रही है। अनेक विचारकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा इस व्यवस्था को चुनौती दी जा रही है। जिन देशों में बुनियादी सुविधाओं की पुनर्रचना हुई है, वहाँ के लोगों के अनुभवों से सीखने की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

जलक्षेत्र में सेक्टर रिफार्म की असलियत

इस हिस्से में भी उन्हीं मुद्दों पर चर्चा की गई है जिनकी पिछले अध्याय में की गई है। लेकिन फर्क इतना है कि यहाँ इन मुद्दों पर अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के दृष्टिकोण की पड़ताल की गई है। जिसमें स्पष्ट हुआ है कि सेक्टर रिफार्म के संबंध में इन वित्तीय एजेंसियों के तर्क काफी लचर है। बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध करवाना कल्याणकारी सरकारों का दायित्व हैं।

1. बिन पानी सब सून

पानी न केवल मानव बल्कि संपूर्ण जीव जगत के अस्तित्व के लिए अत्यावश्यक है। घरेलू इस्तेमाल, आर्थिक उद्यमों, जीवन बनाए रखने एवं पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में पानी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पानी को 'वस्तु' मानने का अर्थ उसके विशिष्ट और व्यापक महत्त्व की उपेक्षा करके उसे साबुन, तेल की हैसियत में ला खड़ा करना है। बुनियादी जरूरत के नाते पानी की उपलब्धता प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है।

पानी की खरीदी-बिक्री शुरू होने से बाजार व्यवस्था के सभी दुष्परिणाम यहाँ दिखाई देंगे। बाजार का मनुष्य की जरूरत से कोई लेना-देना नहीं होता है। मुनाफा बढ़ाने के लिए विभिन्न तरीकों से कृत्रिम जरूरतें और कृत्रिम संकट निर्माण किया जाएगा। पिछले अनुभवों से स्पष्ट है कि जरूरतों की पूर्ति करते समय पर्यावरणीय निरंतरता का विचार नहीं किया जाता है। अर्थशास्त्र के सिद्धांत भले ही मुक्त स्पर्द्धा के लाभ बताते हों, लेकिन इससे बाजार में आर्थिक इकाईयों का एकाधिकारवाद पनपता है जो निहित स्वार्थों के लिए अवैध तरीके भी अपनाते हैं।

वैसे तो बाजार व्यवस्था के कार्यक्षम होने का दावा किया जाता है, परंतु व्यवहार में बाजारव्यवस्था में काफी फिजूलखर्ची और कार्यक्षमता का अभाव होता है। सूक्ष्म (माईक्रो) स्तर पर कार्यक्षम होने वाली इकाईयों में स्थूल (मैक्रो) स्तर पर सामाजिक दृष्टि से कार्यदक्षता का अभाव हो सकता है। (उदाहरण के लिए निजी दो पहिया, चार चार पहिया वाहनों का उत्पादन तथा प्रयोग कार्यक्षमता से होता है। परंतु इन वाहनों के निर्माण में लगे

संसाधन, उन वाहनों का ईंधन-प्रयोग और उनसे यात्रा करने वाले लोगों की संख्या ध्यान में रखने पर यह सेवा काफी अपव्ययी और अकार्यक्षम साबित होती है। इसकी तुलना में सार्वजनिक परिवहन सेवा अधिक कार्यक्षम होती है।) बाजार से संबंधित इन त्रुटियों का प्रतिबिंब जलक्षेत्र में किस तरह होगा? ताकतवर कंपनियाँ अपनी आर्थिक सत्ता के प्रयोग से पानी के स्रोतों पर कब्जा करेंगी। पानी की बढ़ती माँग को ध्यान में रखकर मुनाफा बढ़ाने के उद्देश्य से पानी की कीमतें बेहद बढ़ाई जाएगी। जिनके पास पानी खरीदने की क्षमता होगी उन्हें ही पानी मिलेगा। बाजार के नियमानुसार क्रयशक्तिविहीन लोगों की पानी की जरूरत पूरी करने की जिम्मेदारी बाजार या सेवा प्रदाताओं पर नहीं होगी। मुनाफा बढ़ाने का दूसरा तरीका है कि पैसे वाले लोगों की पानी की आवश्यकता बढ़ाई जाए। इससे इस प्रकार की परिस्थितियाँ निर्मित होगी कि मौज-मस्ती के लिए अथाह पानी उपलब्ध होगा लेकिन गरीब पीने के पानी से वंचित होंगें। उदाहरण के लिए गरमी के दिनों में गोल्फ कोर्स को हराभरा रखने के लिए पर्याप्त पानी उपलब्ध होगा लेकिन बस्ती वाले साफ पानी के लिए तरसते रहेंगें। ऐसी परिस्थिति को टालने के लिए पानी को व्यक्ति का बुनियादी अधिकार मानना जरूरी है।

मजेदार तथ्य यह है कि अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियाँ भी आज पानी के अधिकारों की भाषा बोल रही हैं। परंतु यह सिर्फ बाजार अधिकार (मार्केट राइट्स) है तथा लोगों के बुनियादी अधिकारों से इसका कोई संबंध नहीं है।

2. पानी लोगों का अधिकार

समाज के सभी घटकों तक विकास के लाभ पहुँचाने की नैतिक जिम्मेदारी कल्याणकारी राज्य की होती है। इसमें माना गया है कि समाज की आर्थिक विषमता, प्रतिकूल सामाजिक संरचना (जाति व्यवस्था, पुरुष प्रधान व्यवस्था आदि) तथा अन्य कारणों से सभी लोग आर्थिक विकास की प्रक्रिया में शामिल नहीं हो सकते। साथ ही, प्रचलित अर्थव्यवस्था में उत्पादन व्यवस्था का केंद्रीकरण होता है। इससे विभिन्न उत्पादक वर्गों द्वारा निर्मित संसाधन समाज के किसी छोटे हिस्से में केंद्रित होते हैं और काफी बड़ा समूह पर्याप्त क्रयशक्ति से वंचित रहता है। एक दृष्टि से ये वंचित लोग आर्थिक-राजनैतिक व्यवस्था के शिकार रहते है। अत: जरूरी है कि उनकी ओर से राज्य हस्तक्षेप करें और उनकी बुनियादी जरूरतों की पूर्ति में मदद करें। साथ ही उन्हें इस दृष्टि से सक्षम बनाए कि वे भविष्य में विकास प्रक्रिया में सम्मिलित हो सके।

गरीब लोगों द्वारा पानी की कीमत चुकाने की तैयारी का मतलब यह नहीं है कि उनकी पानी खरीदने की क्षमता रहती है। अत्यावश्यक होने पर भले ही वे पानी का खर्च उठाएँगे, परंतु इसका विपरीत परिणाम उनकी बुनियादी जरूरतों पर पड़ेगा। ऐसी स्थिति में लोगों की लाचारी को उनकी 'खर्च उठाने की तैयारी' समझना गलत है।

हालांकि कल्याणकारी व्यवस्था में भी वंचित समूहों की परिस्थिति में कहीं कोई गुणात्मक परिवर्तन दिखाई नहीं दे रहा है। उनकी स्थिति बदतर होती जा रही है। लेकिन ढाँचागत बदलाव से उनकी दशा अत्यंत दयनीय हो जाएगी। पूर्ण लागत वापसी के सिद्धांत से बुनियादी सुविधाओं की कीमतें कई गुना बढ़ जाएगी और इन सुविधाओं को प्राप्त करना गरीब लोगों के लिए मुश्किल होगा। सिंचाई के लिए बड़े पैमाने पर पानी का उपयोग करने वाले किसान अपनी आजीविका से हाथ धो बैठेंगें। 'पूर्ण लागत वसूली' का सिद्धांत अभी तक स्वीकृत कल्याणकारी राज्य संकल्पना का विरोधी है।

3. जल नियामक आयोग एक अवांछित कदम

विकास के लाभ गरीबों तक पहुँचाने में सार्वजनिक क्षेत्र नाकाम हुआ है लेकिन इसका हल सार्वजनिक क्षेत्र में ही खोजा जाना चाहिए। आशंका है कि राज्य के बजाय नियामक तंत्र के पास महत्त्वपूर्ण अधिकार केंद्रित होने से जनतांत्रिक निर्णय प्रक्रिया को धक्का लगेगा। राज्य के नीतिगत अधिकारों को सिर्फ आर्थिक-तकनीकी पहलुओं पर विचार करनेवाली नियामक संस्थाओं पर सौंपना कहाँ तक उचित है?

स्वायत्त नियामक की कार्यपद्धति सामान्यत: न्यायालयों के समान होती है। उनके सामने संबंधित क्षेत्रों की कंपनियाँ, सरकार, ग्राहक और समाज के अन्य दल जो मुद्दे रखते हैं, उन पर विचार करके निर्णय लिये जाते है। समाज के जो वर्ग आर्थिक, तकनीकी, वित्तीय जानकारी रखते हैं तथा विश्लेषण करने में सक्षम है वे ही नियमन की प्रक्रिया में प्रभाव डाल सकते हैं। अधिकांश गरीबों के पास इस विधा का अभाव रहता है। विशेषज्ञों की सेवाएँ लेने की क्षमता भी उनमें नहीं होती। इसलिए वे खुद को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण मामलों में भी प्रभाव नहीं डाल पाते। वंचित समुदाय की ओर से हस्तक्षेप करने वाले अधिकांश संस्था-संगठनों के पास भी इस प्रकार की क्षमताएँ नहीं होतीं। इस प्रकार की विशेषज्ञता आधारित निर्णय प्रक्रिया में राजनैतिक हस्तक्षेप को कम किया जाता है। इस प्रक्रिया में माना गया है कि विवेकपूर्ण और कार्यक्षम निर्णय लेने का काम केवल विशेषज्ञ ही कर सकते हैं। लेकिन ऐसी जटिल निर्णय प्रक्रिया से सार्वजनिक हितों का संरक्षण का दावा करना छलावा मात्र है।

स्वायत्त नियामक तंत्र लोगों के प्रति उत्तरदायी नहीं है, अत: जनविरोधी निर्णय लिए जाने पर उसके विरोध का कोई तरीका लोगों के पास नहीं रहता। सवाल यह भी है कि क्या स्वायत्त नियामक तंत्र वास्तव में 'स्वायत्त' होते हैं? हितसंबंधी समूहों की आर्थिक-राजनैतिक ताकत और नियामक तंत्रों में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान होने के कारण वे इस तंत्र को कब्जे में लेने के प्रयास करते हैं। नियामक तंत्रों के पास व्यापक अधिकार होने के बावजूद इसमें आवश्यक पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और जनसहयोग की कारगर व्यवस्था नहीं की जाती है। इसी कारण नियामक तंत्रों के व्यापक अधिकारों पर सवाल उठाए जाते है।

नियामक तंत्र को दिए गए व्यापक अधिकारों के कारण वह संबंधित क्षेत्र में निर्णय का प्रमुख केंद्र रहता है। अत: उस तंत्र के सदस्यों की चुनाव प्रक्रिया अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। जरूरी है कि इनके सदस्य विश्वसनीय, किसी दबाव में न आनेवाले तथा किसी निजी उद्योग में हितसंबंध रखने वाले न हो। प्रचलित मॉडल में इन सदस्यों का चुनाव एक चयन समिति द्वारा होता है। इस चुनाव समिति में उच्चपदस्थ नौकरशाहों का बहुमत होता है। अगर नियामक तंत्र में सभी नौकरशाह होंगे तो संभावना है कि उस व्यवस्था में उनके हितसंबंध पहले से ही हो तथा आवश्यक प्रक्रिया के बारे में उनकी कुछ धारणानाएँ बनी हुई हों। प्रचलित व्यवस्था में कार्यरत रहे लोगों के हाथों में नये ढाँचे के सूत्र देने से उसमें गुणात्मक अंतर आने की संभावना पर प्रश्नचिन्ह है। जानकारों के अनुसार जिन विकसित देशों में स्वतंत्र नियामक तंत्र कार्यरत हैं, वहाँ भी उन्हें अपनी जड़ें जमाने में काफी समय लगा। ऐसे देशों में वहाँ के नागरिक समुदाय का स्वरूप और राजनीति में दबाव समूहों की भूमिका आदि का बड़ा योगदान रहा है। विकासशील देशों की सामाजिक, राजनैतिक विविधताओं और नागरिक समुदायों की स्थिति को ध्यान में रखने पर यह कहना ठीक नहीं होगा कि नियामक तंत्र आमतौर पर सभी देशों में उपयोगी होंगें।

●●●

भाग - 3

मध्यप्रदेश में बिकने को तैयार है पानी

मध्यप्रदेश में वर्तमान में क्षेत्र सुधार की दो परियोजनाएँ जारी है। एक एडीबी सहायतित 'मध्यप्रदेश शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार परियोजना' तथा दूसरी विश्व बैंक की 'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'। इन दोनों परियोजनाओं की शर्तों के तहत प्रस्तावित अधिकांश नीतिगत और संस्थागत बदलाव किए जा चुके हैं जिसके प्रभाव दिखाई देने प्रारंभ हो गए हैं। ३९.६ करोड़ डॉलर की 'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना' परियोजना की शर्तों अनुरूप राज्य में 'जल नियामक आयोग' संबंधी कानून बनाया जाना है जिसका प्रारूप तैयार किया जा चुका है। नियामक कानून अस्तित्व में आते ही यहाँ भी पानी को बाजारी जिंस में तब्दील करने का प्रयास किया जाएगा।

भाग 3

मध्यप्रदेश में बिकने को तैयार है पानी

6. मध्यप्रदेश में प्रस्तावित जल नियामक आयोग के संभावित प्रभाव
7. म०प्र० शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण उन्नयन परियोजना
8. म०प्र० के प्रस्तावित जल नियामक आयोग के प्रभावों पर कार्यशाला एवं आमसभा

3

नियामक व्यवस्था का परिचय

सर्वप्रथम सन् 1887 में अमेरिका में वहाँ की निजी रेल कंपनियों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए सर्वप्रथम नियामक आयोग की स्थापना की गई थी। नियामक तंत्र की आवश्यकता बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में निजी कंपनियों के 'प्राकृतिक एकाधिकार' को नियंत्रित करने हेतु महसूस की गई थी। जब कोई सुविधा उपलब्ध करवाने में बड़ी मात्रा में पूँजी निवेश की जरूरत होती है, तब ऐसी सुविधाओं के लिए आर्थिक दृष्टि से एक ही सेवाप्रदाता को होना किफायती होता है। लेकिन ऐसी परिस्थिति में उस सेवाप्रदाता का उस क्षेत्र में एकाधिकार कायम हो जाता है। उदाहरण के लिए बिजली, पानी, रेल आदि सुविधाओं के लिए जरूरी निवेश तथा इन सेवाओं की व्यापकता को ध्यान में रखकर अलग-अलग कंपनियों द्वारा अपने-अपने रेलमार्ग तथा बिजली लाइनों का जाल बनाना आर्थिक दृष्टि से उचित नहीं है। ऐसे में जहाँ बड़े पूँजी निवेश के साथ उसकी वापसी का समय अधिक हो, ऐसी बुनियादी सुविधाओं का जिम्मा राज्य पर रहा है। तब स्वाभाविक रूप से सेवा प्रदाय का काम किसी एक सेवाप्रदाता के पास रहता है जिसे 'प्राकृतिक एकाधिकार' कहा जाता है। इस प्रकार के एकाधिकार में सेवाप्रदाता कंपनी सुविधा का जो मूल्य तय करती है, लोगों को उसका भुगतान करना पड़ता है। स्पर्द्धा न होने के कारण इस व्यवस्था में सेवाप्रदाता कंपनी को लाभ कमाने के असीमित अधिकार होते हैं। इसलिये जनहित में उस कंपनी पर नियंत्रण रखने के लिए नियामक तंत्र की आवश्यकता होती है।

अमेरिका में स्वायत्त नियामक तंत्र की शुरुआत के बाद इस तंत्र के विकास में काफी समय लगा। हालांकि वहाँ ये तंत्र बड़ी मात्रा में उपयुक्त साबित हुए लेकिन इसमें अमेरिका के नागरिक समाज का विशिष्ट स्वरूप और वहाँ के दबाव समूहों की भूमिका का बहुत बड़ा हाथ है।

भारत तथा अन्य विकासशील देशों में औपनिवेशिक काल में क्रियान्वित आर्थिक नीतियों के कारण पूँजीवादियों की ताकत सीमित रही। लेकिन, उदारीकरण-भूमण्डलीकरण और निजीकरण की नीतियाँ स्वीकार करने पर अनेक देशों ने बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में ढाँचागत बदलाव और सुधार की प्रक्रिया प्रारंभ की। बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में अगर निजी पूँजी की आवश्यकता हो तो निवेशकों को आश्वस्त करना जरूरी हुआ कि उनके लिए उचित और तटस्थ तरीके से निर्णय लिए जाएँगें अर्थात् राजनैतिक दृष्टि से निर्णय नहीं लिए जाएँगें।

सेक्टर रिफार्म लागू होने से सन् 1980 के बाद विकासशील देशों में भी स्वायत्त नियामक तंत्र स्थापित करने की बाढ़ सी आ गई। अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा कर्ज देते समय रखी गई शर्तें भी इसका कारण बनीं।

लैटिन अमेरिका, एशिया, मध्य और पूर्व यूरोप के कई देशों सहित पिछले दो दशकों में दुनिया भर में लगभग 200 स्वायत्त नियामक तंत्रों की स्थापना हुई।

भारत में तेल-गैस, दूरसंचार, और विद्युत क्षेत्र में इनकी स्थापना हो चुकी है तथा बंदरगाह, हवाईअड्डा, परिवहन, डाक, गृह तथा जल क्षेत्र में भी स्वायत्त नियामक तंत्र का गठन विचाराधीन है। संक्षेप में नियमन के क्षेत्र में हो रहे बदलाव केवल विशिष्ट क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं बल्कि व्यापक और बुनियादी हैं तथा इनके गहन विश्लेषण की आवश्यकता है।

●●●

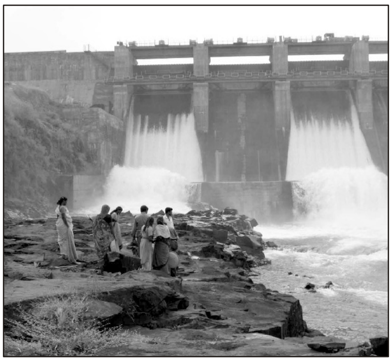

भाग - 4

महाराष्ट्र में पानी का बाजार

महाराष्ट्र के अनुभव से सामने आया कि जन आक्रोश से डर कर सरकार ने पानी के निजीकरण की गति अपेक्षाकृत धीमी रखी है। हालांकि यह सरकार की रणनीति का हिस्सा है लेकिन हमें सावधान तो रहना ही होगा। हाल ही में महाराष्ट्र जल नियमन प्राधिकरण ने सिंचाई दर निर्धारण की प्रक्रिया शुरू की है। जिस आधार पर दर निर्धारण का प्रस्ताव रखा गया है उससे यह तय है की पहले से दयनीय दौर से गुजर रही कृषि अर्थ व्यवस्था और समाज का बड़े हिस्से किसानों पर इसका वितरीत प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा।

भाग 4

महाराष्ट्र में पानी का बाजार

9. महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के गठन की प्रक्रिया एवं स्वरूप

10. महाराष्ट्र जल नियामक आयोग के अनुभव और सीख

4

उत्तर प्रदेश जल प्रबंधन एवं नियामक आयोग अधिनियम

पानी के बाजारीकरण पर कानूनी मोहर

सुधारों के नाम पर लगभग सभी आर्थिक व सामाजिक क्षेत्रों में बुनियादी तौर पर व्यापक बदलाव हो रहे हैं। ये बदलाव बाजार के सिद्धांतों पर आधारित हैं जिन्हें आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण के एजेण्डे के हिस्से बतौर स्वीकार कर लिया गया है। इन बदलावों से पानी की व्यवस्था भी बदल रही है, जो कि हर किस्म की जिंदगी के लिए एक अहम् हिस्सा होती है। सबसे ज्यादा विचलित कर देने वाला तथ्य यह है कि इनमें से अधिकांश बदलाव बगैर जनता से राय-मशविरा किये, बगैर इनकी जानकारी लोगों को दिये किये जा रहे हैं। नतीजा यह है कि ऐसे बदलाव भी धड़ल्ले से हुए जा रहे हैं जिनको आगे चाहें भी तो वापस नहीं लिया जा सकता। और, यह सब न तो जनता की जानकारी में लाया जा रहा है और न ही जन प्रतिनिधियों को इन मामलों की कोई मालूमात हैं। पानी के क्षेत्र में नियामक ढाँचे का गठन ऐसे ही बदलावों की एक मिसाल है। बगैर पर्याप्त बहस के ऐसे कई और कानून पारित भी हो चुके हैं।

भारत के जल क्षेत्र में विभिन्न राज्यों के भीतर चल रहीं कानूनी सुधार की प्रक्रियाओं का सबसे ताजा वाकया उत्तर प्रदेश की विधानसभा में हाल में पारित हुआ **उत्तर प्रदेश जल प्रबंधन एवं नियामक आयोग अधिनियम, 2008**[1] (जिसे आगे संक्षेप में 'उ०प्र० नियामक अधिनियम' कहा गया है) है। महाराष्ट्र वो पहला राज्य था जहाँ सन् 2005 में इसी किस्म का एक कानून **महाराष्ट्र जल संसाधन नियामक अधिनियम** (जिसे आगे संक्षेप में 'महा० नियामक अधिनियम' कहा गया है) के गठन के लिए बनाया गया था। अरुणाचल प्रदेश ने इसी तर्ज पर चलकर 2006 में ऐसा ही कानून बनाया था। दूसरे राज्यों में भी जल क्षेत्र में इसी प्रकार के नियामक आयोग बनाने की योजनाएँ बनायी जा रही हैं।

जल क्षेत्र में नियामक आयोग की स्थापना का जल क्षेत्र में सार्वजनिक हितों[2] पर बहुत व्यापक प्रभाव होगा। इस नोट में उ०प्र० नियामक अधिनियम का संक्षिप्त परिचय देने और सार्वजनिक महत्त्व के मुद्दों पर रोशनी डालने की कोशिश की गई है। चूँकि उ०प्र० नियामक अधिनियम अपनी कुछ खास भिन्नताओं के बावजूद काफी कुछ महाराष्ट्र के इसी प्रकार के कानून से मिलता है इसलिए इन दोनों कानूनों का एक तुलनात्मक अध्ययन भी इसमें किया गया है।

1 यह नोट उत्तर प्रदेश जल प्रबंधन एवं नियामक आयोग संबंधी बिल के आधार पर तैयार किया गया है।

2 सार्वजनिक हित में गरीब और वंचित समुदाय के साथ ही संपूर्ण समाज का हित शामिल है।

उत्तर प्रदेश नियामक आयोग

उ॰प्र॰ नियामक अधिनियम की शुरुआत को उन बाजार केन्द्रित सुधारों की प्रक्रियाओं में ढूँढ़ा जा सकता है जो देश के अलग-अलग हिस्सों में सतह के नीचे चल रही हैं। यह सुधार जल नियमन के डबलिन सिद्धांतों के अनुरूप हैं जो 1992 में डबलिन (आयरलैण्ड) में हुए अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के भागीदारों द्वारा बनाये और अपनाये गये थे। इनमें से एक सिद्धांत के मुताबिक, उपयोग में बढ़ती जा रही प्रतिस्पर्द्धा की वजह से पानी का एक आर्थिक मूल्य भी होता है, और पानी को हमें एक आर्थिक लक्ष्य के तौर पर देखना चाहिए। पानी के प्रति ये नज़रिया पानी के प्रबंधन और नियमन को बाजार के सिद्धांतों के माफिक बनाता है, जिसमें पूर्ण लागत वापसी[3] भी शामिल है। बाजार की नजर में पानी के लिए भी वही सिद्धांत हैं जो किसी और आर्थिक वस्तु या सेवा के लिए लागू होते हैं।

निजीकरण और पूर्ण लागत प्राप्ति के इलाज के नुस्खे इसी बाजार केन्द्रित जल व्यवस्था से निकले हैं। भूमंडलीकरण की नीतियाँ अपनाने के बाद भारत में केन्द्र सरकार ही नहीं, बल्कि राज्य सरकारें भी पानी के क्षेत्र में सुधारों के नाम पर तेजी से अनेक बाजार केन्द्रित कदम उठाये जा रही हैं। जो सुधार विकास परियोजनाओं के हिस्से बनकर आये थे, उन्होंने धीरे-धीरे जल नियमन के लिए बनी हुई नीति और कानूनी ढाँचे को भी बदलना शुरू कर दिया।

भारत में जल क्षेत्र में सुधारों की कतार में अब निशाने पर कानूनी प्रावधान हैं। उ॰प्र॰ नियामक अधिनियम और महा॰ नियामक अधिनियम जैसे नये कानून पानी के नियमन की हमारी मौजूदा व्यवस्था को पूरी तौर पर बदलने के लिए तैयार हैं। इनसे जो नुकसान होंगे, उन्हें ठीक करना संभव नहीं होगा। इसलिए अभी, बिल्कुल अभी यह जरूरी है कि नागरिक संगठन व जल उपभोक्ता समूह, और वो सभी जिन पर इन सुधारों की गाज गिरेगी, वो सभी जागें और इस अहम सार्वजनिक हित के मसले पर जनता के बीच एक बहस और चेतना विकसित करें।

नियमन के दायरे में बुनियादी बदलाव

यह समझना जरूरी है कि महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, या अरुणाचल प्रदेश में जल नियामक प्राधिकरणों या आयोगों की स्थापना का मकसद एक ऐसी नियामक संस्था की स्थापना करना है जिसे स्वतंत्र नियामक प्राधिकरण कहा जा रहा है। ऐसे स्वतंत्र प्राधिकरण भारत में दूसरे क्षेत्रों में बनाये भी जा चुके हैं, मुख्य रूप से दूरसंचार (ट्राई), विद्युत (राज्य विद्युत नियामक आयोग) जैसे ढाँचागत क्षेत्रों में और साथ ही बीमा जैसे सेवा क्षेत्र में भी। सिक्युरिटीज एण्ड एक्सचेंज बोर्ड ऑफ इंडिया (सेबी) सिक्युरिटीज बाजार के क्षेत्र में स्वतंत्र नियामक आयोग की तरह ही काम करता है।

---

3 पूर्ण लागत वापसी का अर्थ जलप्रदाय में खर्च होने वाली समस्त लागतें जिनमें पूँजीगत लागत के अलावा संचालन–संधारण खर्च तथा निवेश पर मुनाफा भी शामिल है। ये लागतें उपभोक्ताओं से जल दरों के रूप में वसूली जाती है।

नीति और नियमन का जो ढाँचा है, उसको देखते हुए इन स्वतंत्र नियामक प्राधिकरणों से ये उम्मीद की जाती है कि ये (अ) सेवा का उपभोग करने वालों के हितों, और (ब) बाजार व बाजार में मौजूद निजी क्षेत्र के खिलाड़ियों के हितों के बीच संतुलन कायम करने का काम करेंगे। ऐसा करते हुए इन प्राधिकरणों से ये उम्मीद भी की जाती है कि ये क्षेत्र में स्वस्थ, मुक्त व न्यायोचित स्पर्द्धा के लिए जरूरी अच्छा माहौल भी बनाएँ। और ऐसा करने के लिए जाहिर है कि इन प्राधिकरणों को जरूरी अधिकार भी हासिल हों ताकि वो मुख्य आर्थिक मसलों, मसलन, प्रतियोगिता के कायदे, सेवाओं की कीमतें, अलग-अलग अंशधारकों के बीच विभिन्न सेवाओं या दूसरे फायदों का वितरण आदि मामलों पर निर्णय ले सकें। इस तरह इन प्राधिकरणों को अक्सर वो अधिकार भी मिल जाते हैं जो अदालतों के होते हैं, और इस तरह इन प्राधिकरणों की प्रकृति अर्ध न्यायिक हो जाती है। अर्ध न्यायिक प्रकृति और नियम बनाने की जिम्मेदारी की वजह से इन संस्थाओं को अपने निर्णय करने की प्रक्रियाओं में स्वतंत्र होना जरूरी माना जाता है। अत: ऐसा मान लिया जाता है कि नाजायज राजनीतिक दबावों से मुक्त रहकर ऐसी संस्थाएँ, जिनके पास अपने क्षेत्र की विशेषज्ञता और साथ में न्यायिक अधिकार भी रहते हैं, वे पूरे क्षेत्र में उच्च आर्थिक दक्षता ला सकती हैं।

ऐसे स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों के अस्तित्व में आने के पहले, प्रमुख क्षेत्रों के अहम निर्णय सरकारी विभागों और मंत्रालयों द्वारा लिए जाते थे। उस स्थिति में उनके निर्णयों के विभिन्न कारणों से प्रभावित हो सकने की आशंका बेशक रहती थी। वे प्रभाव सही राजनीति के भी हो सकते थे, निहित स्वार्थों के भी और किसी विशेष सत्तारूढ़ राजनीतिक दल अथवा मंत्री की कोई अतार्किक सनक से भी वे प्रभावित हो सकते थे। स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों के बनने से दरअसल नियमन का काफी सारा कामकाज सरकारी महकमों से इन नये बने प्राधिकरणों पर आ गया। इससे सरकार के किसी क्षेत्र को नियमों द्वारा नियंत्रित करने की भूमिका में एक बुनियादी बदलाव आया। इस बदलाव के अनेक प्रतिकूल असर भी हो सकते हैं, मसलन :

- ऐसे स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों के नियम आदि बनाने के कामकाज में महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक हित के मसलों का पूरी तरह अराजनीतिकरण हो गया यानि उनके बारे में निर्णय करने में अच्छी-बुरी, कैसी भी राजनीति की दखलंदाजी नहीं रह गयी। इससे सही और न्यायपूर्ण राजनीति के लिए भी ये गुंजाइश बहुत सीमित हो गयी कि वो किसी प्रमुख क्षेत्रगत निर्णय पर अपना असर डाल सके।
- स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण उस तरह जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होते जिस तरह सरकार होती है। सरकार को तो चुनाव प्रक्रिया में जनता के प्रति सीधे जवाबदेह होना ही होता है।
- चूँकि स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण के पास न तो वैसी वित्तीय ताकत रहती है और न ही वैसे ज्ञान के संसाधन, जिस तरह के ये संसाधन बाजार की सेवा में रहते हैं, इसलिए बाजार इन स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों पर एक किस्म का कब्जा कर लेता है। स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण की तकनीक केन्द्रित और न्यायिक कार्रवाइयों पर बाजार के खिलाड़ियों का काफी असर रहता है। इससे एक ऐसी स्थिति बन सकती है जिसमें सार्वजनिक हित की, गरीबों और दूसरे कमजोर तबकों की जायज और ईमानदारी से उठायी जाने वाली आवाज की जगह और भी कम होती जाए।

हालाँकि स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण जनहितों को किसी क्षेत्र के केन्द्र में लाने में भी सहायक हो सकते हैं। मसलन स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण के पास ये क्षमता होती है कि वो अपने अधिकार वाले क्षेत्र में निर्णय प्रक्रियाओं में पारदर्शिता ला सके, जहाँ अन्यथा चीजें धुँधली होती हैं। इसी तरह स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण क्षेत्र विशेष के सभी भागीदारों की सघन, सक्रिय और सार्थक भागीदारी सुनिश्चित कर सकता है, जिनमें समाज के हाशिये पर पड़े तबकों का भी प्रतिनिधित्व शामिल हो। लेकिन, इन सभी उजली संभावनाओं पर तब ग्रहण लग जाता है जब स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों की स्थापना के कानून ही क्षेत्र के नियमन पर लोगों का असरकारक नियंत्रण बनाने के हक में न हों। और यदि प्रशासन के बुनियादी ढाँचे में ही बाजार केन्द्रित सोच प्रभावी हो, खासकर पानी जैसी जीवनावश्यक चीज के क्षेत्र में, तो ये उम्मीद करना मुश्किल है कि स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण हमेशा जनता के हित को बाजार के निहित स्वार्थ यानि मुनाफे के सामने प्राथमिकता पर रखेगा।

स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण के आने से नियमन के क्षेत्र में आये इस बुनियादी बदलाव के साथ ही कुछ और भी बदलाव आये हैं, जो खासतौर पर पानी के क्षेत्र से संबंधित हैं। ये बदलाव नये नियमन कानूनों के साथ आएँगे। इन बदलावों की कुछ चर्चा हम आगे में करेंगे।

पानी पर अधिकार

पानी के क्षेत्र में बनाये जा रहे स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण के ढाँचे के मूल में पानी पर अधिकार की व्यवस्था को बनाना, उसका प्रबंधन और नियमन करना है। इस व्यवस्था के तहत पानी का उपयोग करने वाले विभिन्न व्यक्तियों एवं समूहों को पानी के कुछ निश्चित शेयर दिये जाएँगे। इन्हें पानी के पट्टे कहा जा सकता है। उ०प्र० नियामक अधिनियम और महा० नियामक अधिनियम में इस तरह के कानूनी प्रावधान हैं कि वे विभिन्न जल उपभोक्ता समूहों को पानी पर अधिकार के पट्टे दे सकते हैं और उनका नियमन कर सकते हैं। उ०प्र० नियामक अधिनियम में दी गयी परिभाषा (धारा 2 एच) के अनुसार आयोग द्वारा किसी को किसी विशेष मकसद के लिए दिया गया जल अधिकार केवल जल के उपयोग का अधिकार है। महा० नियामक अधिनियम {धारा 11 (आई)(आई)} में कहा गया है कि ''ये जल अधिकार......उपयोग अधिकार होंगे।'' इनके लिए 'usufructuary rights' शब्द[4] अधिनियम में इस्तेमाल हुआ है, जिसका आशय किसी वस्तु का स्वामित्व पाये बगैर उसके इस्तेमाल के अधिकार हासिल करना है। इस तरह ये अधिकार पानी के इस्तेमाल के लिए कानूनी तौर पर स्वीकृत, रजिस्टर्ड, (लगभग) निरंतर और नियमित होंगें।

इस नयी व्यवस्था को देखने के दो नजरिये हो सकते हैं। एक तरीके से पानी के इस्तेमाल के अधिकार की ये व्यवस्था बन जाने से सभी का, विशेषकर समाज के गरीब और वंचित तबके के लोगों का पानी के संसाधनों पर अधिकार सुनिश्चित हो जाएगा, और इससे विशाल जल संसाधनों पर समाज के प्रभावशाली

4 Webster's New World Dictionary के अनुसार इसका अर्थ दूसरे की संपत्ति में बदलाव किए बगैर और उसे नुकसान पहुँचाए बगैर उस संपत्ति के उपयोग और उपभोग का अधिकार है।

तबके के एकाधिकार को रोकने में मदद होगी। दूसरे, इसे इस नजरिये से भी देखा जा सकता है कि पानी पर भी संपत्ति के माफिक अधिकार दिया गया तो पानी के क्षेत्र में भी मुनाफा कमाने के वैसे ही तौर-तरीके विकसित होंगे जैसे जमीन का बाजार बनने पर हुए। पानी के अधिकार वितरण की व्यवस्था का वास्तव में क्या असर होगा, ये नियमन के प्रावधानों के महीन पहलुओं पर निर्भर करता है, और साथ ही इस पर कि व्यवस्था को लागू करते वक्त किस किस्म की राजनीति हावी होती है-निहित स्वार्थों की या जनहित की।

जल वितरण में समता

पानी के अधिकार वितरण की व्यवस्था के असर उस व्यवस्था में सामाजिक चिंताओं के प्रति सजगता व संज्ञान के स्तर पर निर्भर होंगें। मिसाल के तौर पर जल वितरण में समता आधारित व्यवस्था का सवाल। उ०प्र० नियामक अधिनियम और महा० नियामक अधिनियम -दोनों की ही प्रस्तावना में लिखा हुआ है कि नियामक निकाय को जल संसाधनों का सुचिंतित, समतापूर्ण और टिकाऊ प्रबंधन व वितरण सुनिश्चित करना होगा। कानून 'समता' को जल संसाधनों के वितरण में प्रमुख मार्गदर्शक सिद्धांत के तौर पर मान्यता देता है। इस स्वीकृति से ये उम्मीद करने का आधार बनता है कि पानी पर मालिकाना हकों का समता आधारित वितरण होगा, और इस तरह गरीबों व अन्य वंचित तबकों को भी उनका जायज हक हासिल हो सकेगा।

लेकिन भूमिका में आने के अलावा 'समता' शब्द का उ०प्र० नियामक अधिनियम के पूरे कानूनी दस्तावेज में किसी कानूनी प्रावधान में कहीं और जिक्र तक नहीं आता है। दरअसल, इस अधिनियम में कहीं यह कोशिश भी नहीं दिखायी पड़ती है कि समता आधारित आवंटन शब्द से उनका आशय क्या है और उसके पैमाने क्या होंगे। तो, जब समता शब्द की कोई व्यावहारिक, लागू करने योग्य परिभाषा ही नहीं होगी तो नियमन करने वाला व्यवहार में समता आधारित वितरण कैसे करेगा।

महा० नियामक अधिनियम की धारा 12 (6)(अ)(ब) कहती है कि 'परियोजना के कमांड क्षेत्र में पानी के समता आधारित वितरण के लिए हर भू स्वामी को कोटा आवंटित कर देना चाहिए' और यह कि 'कोटा उसकी कमांड क्षेत्र में मौजूद जमीन के आधार पर तय होना चाहिए'। इस तरह पानी केवल उन लोगों को मुहैया कराया जाएगा जिनकी जमीन कमांड क्षेत्र में हो और जितनी ज्यादा जमीन, उतना ज्यादा पानी। महा० नियामक अधिनियम में समता का आशय सिर्फ भूस्वामियों तक ही सीमित कर समता के सिद्धांत की एक समावेशी व्याख्या को अमली जामा पहनाने के अवसर को चूक जाने दिया गया। समता का ये अर्थ भी निकाला जा सकता था कि सभी के लिए पानी और सभी में भूमिहीन किसानों को भी शामिल किया जा सकता था।

गनीमत है कि उ०प्र० नियामक अधिनियम द्वारा समता की परिभाषा पर ऐसी कोई कानूनी बंदिश नहीं लगायी गयी है। इससे उत्तर प्रदेश में एक मौका है कि कानून के लागू करने के लिए बनने वाले आवश्यक नियमों प्रावधानों को प्रभावित करके किसी तरह समता शब्द की परिभाषा को समावेशी व व्यापक किया जा सके।

पानी पर मालिकाना हक की व्यवस्था (कानूनी तौर पर मान्यता प्राप्त व निरंतर उपयोग के अधिकार) और जितनी जमीन, उतने पानी के आवंटन की व्यवस्था-इन दोनों प्रावधानों का सम्मिलित प्रभाव यह होगा कि बड़ी जमीनों के मालिक अमीर किसानों को जल संसाधनों पर लगभग पूरा कब्जा ही मिल जाएगा। और, वह भी सिर्फ सरकार से ही नहीं, बल्कि कानून से भी मान्यताप्राप्त। समता शब्द की संकुचित परिभाषा के साथ बनने वाली पानी पर मालिकाना हक की व्यवस्था का परिणाम पानी के जमींदारों के उभरने के रूप में निकलेगा। चूँकि वे जमीन की नहीं, पानी की संपत्ति के कुबेर होंगे, इसलिए उन्हें जमींदार के बजाय पानीदार भी कहा जा सकता है, हालाँकि पानीदार का एक अर्थ स्वाभिमानी होता है।

बहरहाल, इस सबसे उसी तबके की ताकत में इजाफा होगा जिसके पास आज भी सबसे ज्यादा आर्थिक-राजनीतिक संसाधन और ताकत है, और कमजोर तबके की अपने हक की आवाज उठाने की बची-खुची थोड़ी सी जगह भी और कम हो जाएगी। यही नहीं, समस्या तब और भी जटिल हो जाती है जब पानी के मालिकाना हक की व्यवस्था के साथ पानी के बाजार से जुड़ी हुई कड़ियों को तलाशा जा रहा है।

पानी का बाजार

उ०प्र० नियामक अधिनियम में पानी के बाजार बनाने के लिए विशिष्ट प्रावधान नहीं हैं, लेकिन इस कानून में पानी के मालिकाना हक के तंत्र के निर्माण और पानी के बाजार के बीच स्पष्ट कड़ी नजर आती है। इसलिए यह काफी संभव है कि एक बार पानी के मालिकाना हक का तंत्र विकसित हो जाए तो औपचारिक रूप से पानी का बाजार भी बन सकता है। रणनीतिक रूप से देखा जाए तो पानी के मालिकाना हक को कानूनी मान्यता देना एक तरह से पानी के बाजार को खड़ा करने की ही पूर्वपीठिका है। क्योंकि एक बार पानी के मालिकाना हक का तंत्र खड़ा हो जाएगा तो पानी का व्यापार कानूनी तंत्र के तहत हो सकेगा।

जिन देशों ने पानी के बाजार को खोला है उनके अनुभवों को देखते हुए पानी के मालिकाना हक और पानी के बाजार के बीच की कड़ी को समझना बेहद जरूरी है। ऑस्ट्रेलिया में जिस ढंग से पानी के बाजार को खोला गया उसमें पानी पर पहुँच, पानी का वितरण और पानी का व्यापार इस सुधार के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। ऑस्ट्रेलिया की सरकार के मुताबिक पानी के व्यापार में वो सौदे शामिल हैं जिनमें पानी पर पहुँच के मालिकाना हक (स्थायी व्यापार) या पानी पर पहुँच के मालिकाना हक के लिए पानी के आवंटन (अस्थायी व्यापार)[5] का व्यापार हो। इसी तरह से चिली की सरकार ने पानी के उपयोग के अधिकार को (जमीन से अलग) एक निजी संपत्ति की तरह माना है जिसका कि कारोबार किया जा सकता है, उसे गिरवी रखा जा सकता है और उसे कर उगाहने[6] की संपत्ति के रूप में उपयोग किया जा सकता है। वहीं चिली की सरकार पानी के सभी उपभोक्ताओं को निश्चित मात्रा में पानी की आपूर्ति करती है यानी कि पानी की राशनिंग करती है। इस तरह चिली में पानी का बाजार पानी के क्षेत्र के भीतर और बाहर पानी के मालिकाना हक को खरीदने और बेचने की सुविधा देता है।

---

5 स्रोत : Government of Australia, (2005). *Water Access Entitlement, Allocations and Trading.* Australian Bureau of Statistics, Australia

6 स्रोत : Saleth Maria R, Dinar Ariel, (1999). *Water Challenge and Institutional Response: A Cross-Country Perspective.* World Bank

हालाँकि उ०प्र० नियामक अधिनियम में पानी के मालिकाना हक और पानी के बाजार के बीच सीधे और स्पष्ट प्रावधान नहीं हैं, लेकिन पानी के मालिकाना हक और पानी के बाजार के बीच की मजबूत कड़ी के मद्देनजर, एक बार अगर पानी के मालिकाना हक की व्यवस्था कायम हो गयी तो भविष्य में पानी के बाजार का तंत्र भी खड़ा किया जा सकेगा। भारत में पानी के बाजार के बनने की सोच अभी काल्पनिक कही जा सकती है। फिलहाल यह महज दूसरे देशों के अनुभवों के आधार पर ही सामने आई है। इस अधिनियम के प्रावधान में पानी के मालिकाना हक की व्यवस्था बनाई ही इसलिए गई है ताकि भविष्य में पानी का आवंटन बाजार के जरिए हो सके।

महा० नियामक अधिनियम {धारा-11(आई)} के अनुसार पानी के मालिकाना हकों के व्यापार के पैमाने तय करने के अधिकार नियामक निकाय के होंगे। यह कानून आगे {धारा -11 (आई)(आई)} कहता है कि 'पानी के ये मालिकाना हक...... उपयोग के अधिकारों के समान होंगे जिन्हें खरीदा या बेचा जा सकता है, जिनकी अदला-बदली हो सकती है या उन्हें एक से दूसरे को दिया जा सकता है'। इसलिए पानी का बकायदा एक बाजार तैयार होना अब केवल एक नीतिगत बहस का ही मसला नहीं है बल्कि अब यह नियामक ढाँचों में दाखिल हो चुका है और देश के एक राज्य में कानूनी स्वीकृति भी हासिल कर चुका है। यह निश्चित है कि पूरे देश के विभिन्न हिस्सों में पानी के मालिकाना हक की व्यवस्था और पानी के बाजार की व्यवस्था के इस मॉडल को दोहराने की भरपूर, हर मुमकिन कोशिशें की जाएँगी।

उत्तर प्रदेश सरकार को इतना समझदार कहा जा सकता है कि उसने कम से कम पानी के पट्टों के व्यापार का प्रावधान करने से खुद को दूर रखा। लेकिन, जब कानून को लागू करने के लिए नियम, तरीके बनाए जाएँगे तो पीछे के रास्ते से इसकी अनुमति को शामिल कर लिया जाना भी हैरत की बात नहीं होगी।

चिली में किया गया एक अध्ययन बताता है कि पानी को संपत्ति की तरह उपयोग करने की व्यवस्था में पानी पर किसानों का हक बहुत तेजी से कम हुआ। इससे उनके जीवन स्तर में भी गिरावट[7] आई। ऐसे असर भारत की कृषि अर्थव्यवस्था और समूची ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए बेहद खतरनाक साबित हो सकते हैं।

शुल्क दर (टैरिफ) व्यवस्था

स्वतंत्र नियामक प्राधिकरणों का एक प्रमुख काम एक टैरिफ या शुल्क दर व्यवस्था बनाना और उसे संचालित करना है। उ०प्र० नियामक अधिनियम और महा० नियामक अधिनियम दोनो में ही जल दर के निर्धारण और नियमन की जिम्मेदारी संबंधित नियामक संस्थाओं को सौंपी गई है। जल दर का निर्धारण लागत वसूली के सिद्धांत पर किया जाएगा। लागत वसूली के सिद्धांत को बारीकी से समझना जरूरी है और दोनों प्रदेशों के कानूनों में जो लागत वसूली के स्तरों का उल्लेख है, उनके अनुसार इस सिद्धांत को लागू करने का विश्लेषण करना भी जरूरी है।

---

7 स्रोत : Romano D, Leporati M, (undated). *The* Distributive *Impacto of The Water Market in Chile: A Case Study in Limarí Province, 1981 – 1997*.

लागत वसूली के सिद्धांत की उत्पत्ति असल में पानी को एक आर्थिक वस्तु मानने के सिद्धांत से होती है। यह तर्क दिया जाता है कि पानी का आर्थिक मूल्य है और इसलिए इस सेवा को उपभोक्ता तक पहुँचाने में आने वाली लागत की वापसी को शामिल किया जाना चाहिए।

ध्यान देने की बात है कि भारत के अनेक हिस्सों में वसूला जाने वाला पानी का शुल्क उपयोगकर्ताओं की वहन करने की क्षमता पर निर्भर करता है। नतीजा यह है कि बहुत सी जगहों पर पानी बिल्कुल मुफ्त या भारी सब्सिडी के साथ दिया जाता है। जलसेवा में आने वाले इस खर्च की भरपाई अन्य साधारण करों से मिलने वाले राजस्व से की जाती है। जाहिर है ऐतिहासिक रूप से जल सेवाओं को मुख्यत: सामाजिक सेवाएँ और पानी को एक सामाजिक वस्तु समझा जाता रहा है।

अब पानी के क्षेत्र में सुधारों के साथ आ रही नई शुल्क व्यवस्था इस सिद्धांत को पूरी तरह उलट देती है और पानी को आर्थिक वस्तु मानकर नई व्यवस्था बनाती है। यह आमतौर पर माना जाने लगा है कि जल सेवाओं को या तो एक व्यवसाय की तरह चलना चाहिए और या फिर उन्हें पूरी तरह एक व्यापार ही बन जाना चाहिए। व्यापार की तरह होने वाले कामों की शर्त ही लागत की पूरी तरह वसूली होती है।[8] पानी के पूरी तरह व्यापार बन जाने पर जो शुल्क उपभोक्ताओं से वसूला जाएगा, उसका सिद्धांत भी पूर्ण लागत वसूली होगा।

आज भारत के अधिकांश राज्य सैद्धांतिक तौर पर अपनी राज्य जल नीतियों में लागत वापसी के सिद्धांत को स्वीकार कर चुके हैं। फिर भी अभी तक इस सिद्धांत को आधार बनाकर पानी की दरें तय करने का कोई औपचारिक ढाँचा नहीं था। उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र के जल नियामक कानूनों में उपयुक्त प्रावधान करके इसकी भी शुरूआत कर दी गई है। इससे जल सेवाओं को आर्थिक नजरिए से देखने को न्यायिक वैधता मिल गई है। दोनों ही कानून जल नियामक प्राधिकरणों को लागत वसूली के सिद्धांत पर आधारित शुल्क व्यवस्था कायम करने, निर्धारित और नियमित करने के अधिकारों से लैस करते हैं। महाराष्ट्र का कानून लागत वसूली के स्तर को संचालन एवं संधारण (operation & maintenance) की लागत तक सीमित रखता है। उ०प्र० नियामक अधिनियम संचालन एवं संधारण की लागत के साथ-साथ आंशिक रूप से पूँजीगत खर्च की वसूली का भी प्रावधान करता है। इससे जल सेवाओं के और ज्यादा व्यावसायीकरण का रास्ता तैयार होता है। पूँजीगत खर्च की वसूली के प्रावधान से जल क्षेत्र में भी निजीकरण के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार होना तय है।

यह समझना जरूरी है कि अभी तक उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र दोनों के जल नियामक कानूनों में निवेश पर प्रतिफल की वसूली या जल दर से मुनाफा कमाने का प्रावधान नहीं किया गया है। निजीकरण के पैरोकार यह तर्क देते हैं कि अगर वसूली का यह स्तर प्राप्त कर लिया जाए तो काफी सारे निजी निवेशक जल की ओर आकर्षित होंगे क्योंकि तब शुल्क वसूली में एक निश्चित प्रतिशत का प्रावधान निवेशकों के मुनाफे के तौर पर वसूला जाएगा। प्रयास द्वारा महाराष्ट्र जल संसाधन नियामक प्राधिकरण (जिसे आगे संक्षेप में 'महा०

8 स्रोत : Kessler Timothy, (2005). *Social Policy Dimensions of Water and Energy Utilities: Knowledge Gaps and Research Opportunities*. World Bank

नियामक प्राधिकरण' कहा गया है) के समक्ष दाखिल एक याचिका के प्रमुख मुद्दे लागत वसूली के स्तर की कानूनी परिभाषा और जल सेवाओं का निजीकरण है। यह आश्चर्यजनक है कि उप्र के कानून में पानी के लिए दी जाने वाली सब्सिडी की लागत भी वसूल करने के प्रावधान किए गए हैं। ऐसी कोई भी कोशिश सेवा देने वालों पर, लागत में से सब्सिडी का हिस्सा कम करने का जबर्दस्त दवाब डालेगी, जिसका सीधा अर्थ है कि कीमत बढ़ेगी।[9]

शुल्क दर व्यवस्था पर विचार-विमर्श से लगता है कि उप्र का कानून अगले दौर के बाजार आधारित नियामक सुधारों की संगति में है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि इस शुल्क दर व्यवस्था में जनहित के बहुत सारे महत्त्वपूर्ण मुद्दों की अनदेखी की गई है।

जल सेवाप्रदाताओं को लाईसेंस

उ०प्र० नियामक अधिनियम का महा० नियामक प्राधिकरण से बुनियादी फर्क है-जल सेवा प्रदाताओं को लाइसेंस प्रदान करने का प्रावधान करना ताकि विभिन्न जल सुविधाओं एवं सेवाओं की कार्यप्रणाली का बेहतर नियमन किया जा सके। इस मामले में यह अधिनियम महा० नियामक प्राधिकरण से बेहतर है। महा० नियामक प्राधिकरण जल सेवा व सुविधाओं के नियमन के मामले में एक कमजोर कानून है। उ०प्र० नियामक अधिनियम के तहत लाईसेंस देने की, निरस्तीकरण व संशोधन की शर्तों व प्रक्रियाओं के नियमन के अधिकार रखता है। इसके साथ ही राजस्व सहित अन्य शुल्कों व सेवा मानकों और इन मानकों को निर्धारित करने की प्रक्रियाएँ तय करने और लाइसेंस धारक से उन मानकों को सुनिश्चित करवाने के अधिकार भी इस कानून में मिले हैं। दरअसल यह सेवाओं को नियमित करने वाली सोच को ही आधार बनाकर चलता है। यही नज़रिया बिजली और दूरसंचार जैसे क्षेत्रों में भी देखने को मिलता है, जो केवल आर्थिक नियमन ही नहीं, बल्कि सेवाओं के नियमन को भी शामिल कर लेती है। इस लिहाज से देखा जाए तो यह कानून जल सेवाओं के क्षेत्र में अगली पीढ़ी के नियामक ढाँचों से आगे ही है।

यदि भारत की जल सेवाओं के निराशाजनक परिदृश्य को ध्यान में रखकर देखा जाए तो इस कानून में आर्थिक व सेवा सहित सभी पक्षों को एक साथ शामिल करने की कोशिश को स्वागत योग्य कदम माना जा सकता है। लेकिन आवश्यकता इस बात की है हम जल सेवाओं के क्षेत्र में लाईसेंस राज और इनके निजीकरण के आपसी रिश्तों का विश्लेषण कर सकें। यह माना जाता है कि बहुत से देशों में निजीकरण और उदारीकरण की प्रक्रिया में दरअसल उन्हीं संचालकों को लाईसेंस जारी कर दिये गये जो पहले से ही उन क्षेत्रों में काम कर रहे थे। इसलिए जरूरत इस बात की है इस लाईसेंस व्यवस्था बनाने से जुड़े तमाम प्रावधानों को जन मुद्दों के परिप्रेक्ष्य में और गहराई से देखा जाए।

---

9 प्रयास ने यह याचिका जनवरी 2008 में महाराष्ट्र में एक सिंचाई परियोजना को एक निजी हाथों में सौंपने के प्रयास के विरूद्ध लगाई थी। याचिका मूल रूप से महाराष्ट्र नियामक अधिनियम एवं संबंधित शुल्क प्रावधानों के उल्लंघन के विरूद्ध थी। महाराष्ट्र नियामक प्राधिकरण द्वारा नवंबर 2008 में जारी आदेश के अनुसार सिंचाई परियोजना का निजीकरण चाहने वाले पक्ष को अपना प्रस्ताव तब तक वापस लेने हेतु निर्देशित किया गया जब तक कि शुल्क वसूली के स्तर को संचालन एवं संधारण लागत के स्तर तक सीमित करने वाली निजीकरण नीति न बनाई जाए और उसमें नियामक प्राधिकरण की भूमिका न सुनिश्चित की जाए। याचिका संबंधी जनकारी प्रयास, पुणे (महाराष्ट्र) से प्राप्त की जा सकती है। संपर्क ईमैल – reli@prayaspune.org

एकीकृत राज्य जल योजना

जल संसाधनों से जुड़ी योजनाओं में स्थान, आकार सहित अन्य आयामों के बारे लिए गए निर्णयों का क्षेत्र विशेष के विकास से खास रिश्ता होता है। स्थानीय स्तर पर यह मसले क्षेत्र के लिए सर्वाधिक संवेदनशील और विवादास्पद होते हैं। इन निर्णयों को नियमन के दायरे में रखने के लिए उ०प्र० नियामक अधिनियम और महा० नियामक प्राधिकरण दोनों में कदम उठाए गए हैं। इसके लिए एकीकृत राज्य जल योजना (Integrated State Water Plan) की व्यवस्था विकसित करने का प्रावधान किया गया है।

उ०प्र० नियामक अधिनियम के अनुसार यह राज्य जल योजना प्रदेश सरकार द्वारा विकसित की जाएगी और इसका अनुमोदन अधिनियम के द्वारा किया जाएगा। जबकि महा० नियामक अधिनियम के अनुसार राज्य जल योजना के अनुमोदन का अधिकार एक समिति के पास है, जिसमें विभिन्न मंत्री शामिल हैं। महा० नियामक के अधिकार राज्य जल योजना के क्रियान्वयन की निगरानी तक ही सीमित है। इस लिहाज से देखा जाए तो योजनाओं को नियामकों के सीधे नियंत्रण में लाने से उ०प्र० नियामक अधिनियम में भविष्य की सोच दिखाई देती है। राज्य जल योजना जैसी निर्णयात्मक और महत्त्वपूर्ण कड़ी से जुडे सर्वोच्च अधिकारों को स्वतंत्र नियामक प्राधिकरणों को सौंप दिये जाने का खासा बुरा असर पड़ सकता है। विशेषकर उस तरह की आशंकाएँ बढ़ जाती हैं जो जल संसाधानों की योजनाओं के अराजनीतिकरण (डी-पॉलिटिसाइजेशन) से जुड़ी होती हैं। इसलिए आज फौरी जरूरत इस बात की है कि जल संसाधनों के संबंध में बनने वाली योजनाओं के ऊपर से जन नियंत्रण के कमजोर होते पहलुओं को पहचान कर उनका समाधान किया जाए।

पारदर्शिता, जनभागीदारी और जवाबदेही

वैसे तो स्वतंत्र नियामक प्राधिकरणों को स्वशासी संगठन माना जाता है पर फिर भी इनकी जवाबदेही पर सवाल उठते रहे है। समस्या यह है कि उ०प्र० नियामक अधिनियम और महा० नियामक प्राधिकरण जैसे स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों को जल वितरण व शुल्क से जुड़े महत्त्वपूर्ण मसलों पर निर्णय लेने का अधिकार तो दिया गया है पर इनकी कोई सीधी जबावदेही जनता के प्रति नहीं है। इसलिए जननियंत्रण को लागू करने के लिए मात्र एक ही विकल्प बचता है कि इन नियामकों में पारदर्शी, जवाबदेह और जन भागीदारी (Transparency, Accountability and Public Participation) से युक्त प्रक्रियाओं का समावेश सुनिश्चित हो। स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों में पारदर्शी, जवाबदेह और जन भागीदारी का होना ही इनके निर्णय लेने की प्रक्रिया में कुछ हद तक जन नियंत्रण को सुनिश्चित करेगा।

जल क्षेत्र में स्वतंत्र नियमन प्राधिकरण की स्थापना के लिए बनाए गए कानूनी प्रावधानों की अन्य क्षेत्रों, जैसे बिजली के क्षेत्र में स्थापित किए स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों के प्रावधानों से यदि पारदर्शी, जवाबदेह और जन भागीदारी के संदर्भ में तुलना की जाए तो जल क्षेत्र के ये प्रावधान इनकी बनिस्बत कमजोर नजर आते हैं।

मसलन, ऐसे अधिनियमों में प्रयुक्त प्रावधानों के कानून को लागू करने से पहले नियम-कायदों के प्रारूप का पूर्व प्रकाशन अनिवार्य होता है, पर इन दोनों अधिनियमों में ऐसा कोई प्रावधान मौजूद ही नहीं है। ऐसे प्रावधानों से फायदा यह होता है कि नियामक के लिए ये अनिवार्य हो जाता है कि कानून बनने से पूर्व ये

ड्राफ्ट जन संवीक्षा के लिए जनता के सामने आएँ। इससे जनता को उन्हें जानने और उन पर अपनी राय देने का एक अवसर मिलता है। हैरानी की बात तो यह है कि उ०प्र० नियामक अधिनियम में तो उन नियम-कायदों के भी पूर्व प्रकाशन के प्रावधान मौजूद नहीं हैं, जो उक्त कानून को लागू करने के लिए खुद सरकार द्वारा बनाये जाने हैं। जबकि महा० नियामक अधिनियम में यह मौजूद है। इस लिहाज से देखा जाए तो उ०प्र० नियामक अधिनियम नियम-कायदों को बनाने की प्रक्रिया में जनभागीदारी या हस्तक्षेप के लिए कोई जगह मुहैया नहीं कराता है।

यह भी आश्चर्यजनक है कि महा० नियामक अधिनियम में शुल्क दरों संबंधी कानूनों को बनाते समय तो भागीदारों से परामर्श लेने का प्रावधान है, पर उ०प्र० नियामक अधिनियम में इस प्रावधान को भी शामिल नहीं किया गया है। यह अधिनियम कानून बनाने की प्रक्रिया के दौरान जनभागीदारी के सिद्धांत को पूरी तरह से नकार देता है।

यूँ तो पारदर्शिता के मसले पर उ०प्र० नियामक अधिनियम महा० नियामक अधिनियम से ज्यादा प्रगतिशील दिखता है, क्योंकि यह नियामकों द्वारा लिए गए निर्णयों, निर्देशों या आदेशों के साथ उनकी वजहों को जारी करना अनिवार्य बनाता है (उप्र नियामक अधि० की धारा 10(4))। इस लिहाज से अब अपने ही अधिनियम के तहत उ०प्र० नियामक अधिनियम को लिए गए हर निर्णय की वजहों का खुलासा करना पड़ेगा। लेकिन पारदर्शिता से संबंधित एक प्रावधान इस की बची-खुची प्रगतिशीलता की धार को कुंद भी कर देता है। इस प्रावधान (उप्र नियामक अधि० की धारा 18), के अनुसार आयोग को हासिल किसी व्यक्ति या व्यापार से जुड़ी सूचनाएँ वर्गीकृत होंगी और उक्त व्यक्ति या व्यवसाय की सहमति के बगैर इन सूचनाओं का खुलासा नहीं किया जाएगा केवल शुल्क संबंधित सूचनाएँ ही इस नियम का अपवाद होंगी। इस कानून में ऐसा प्रावधान भी मौजूद है जो नियामक को अधिकार देता है कि वो तमाम जानकारियों को अपने अधिकार व नियंत्रण में गोपनीय रख सकता है तथा ऐसी कोई भी जानकारी नियामक की अनुमति के बगैर किसी भी व्यक्ति या एजेन्सी को नहीं दी जा सकेगी। ये प्रावधान, जो एक अलग शीर्षक, 'जानकारियों के खुलासों पर प्रतिबंध' के तहत वर्गीकृत किये गये हैं, नियामक की पारदर्शिता को बढ़ाने संबंधी प्रावधानों पर पानी फेर देते हैं।

पारदर्शिता, जवाबदेही और जन भागीदारी से संबंधित ये खामियाँ स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों के प्रशासन पर जनता के प्रभावी नियंत्रण की संभावनाओं को कमजोर करती हैं। इसका नतीजा स्वतंत्र नियमन प्राधिकरणों के गैर जवाबदेह कामकाज में तो निकल ही सकता है, लेकिन उससे भी बड़ी आशंका इन स्वतंत्र कहे जाने वाले नियमन प्राधिकरणों को निहित स्वार्थ वाले समूहों द्वारा अपने फायदे के लिए इस्तेमाल कर लिए जाने की है।

शास्ति एवं उपकर

इस कानून में जुर्माना महाराष्ट्र के कानून की अपेक्षा काफी सख्त और असहनीय है। और यह कानून नियामक आयोग को यह अधिकार भी देता है कि वो उन भूस्वामियों से भी उपकर वसूल कर सकता है

जिनकी भूमि को बाढ़ नियंत्रण और जलनिकास की नई परियोजनाओं से फायदा हुआ है। इस तरीके के प्रावधानों से जनता पर निश्चित रूप से भार पड़ेगा, खासकर गरीब किसानों पर।

इस बात को ध्यान में रखते हुए कि राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ठीक तरीके से जलस्रोतों के प्रदूषण को रोकने में असफल रहे हैं उ०प्र० नियामक अधिनियम में नियामक आयोग को जल संरक्षण में ठोस भूमिका प्रदान की गई है। महाराष्ट्र के कानून में आयोग को सीमित अधिकार प्राप्त है जबकि उ०प्र० नियामक अधिनियम में उसे जल प्रदूषण आदि के मामले में जुर्माना करने का भी अधिकार है। जुर्माने के तहत जल अधिकारों को भी आयोग वापस ले सकता है।

प्रतिक्रिया की जरूरत

उ०प्र० नियामक अधिनियम के लागू होने के दूरगामी असर राज्य के जल क्षेत्र में पड़ेंगे। जल क्षेत्र में नियामक ढाँचों में बदलाव करने से जनहित के कई गंभीर मसले उभर रहे हैं। अगर इन मुद्दों को ध्यान में नहीं रखा गया तो पानी जैसे जीवनावश्यक संसाधन के साथ जुड़ी लोगों की जिंदगी का काफी नुकसान हो सकता है, इसलिए सामाजिक कार्यकर्त्ताओं, समान विचार वाले सामाजिक समूहों शोधकर्ताओं, मीडिया में कार्यरत लोगों और ऐसे अन्य व्यक्तियों व समूहों को जल क्षेत्र में आ रहे नए बदलावों की जवाबी कार्रवाई की रणनीति बनाने की तत्काल जरूरत है।

यह जवाब हम पर लादे जा रहे नए नियामक ढाँचों के असरों के गहरे विश्लेषणों और एक सही समझ पर आधारित होना चाहिए। भारत के विभिन्न राज्यों में बनने वाले इन स्वतंत्र नियामक प्राधिकरणों से संबंधित जागरूकता और विश्लेषण की गतिविधियों में प्रयास लगातार जारी है। महाराष्ट्र में हमारा तजुर्बा बताता है कि एक बार कानूनी तौर पर ऐसे प्राधिकरण बन जाने के बाद वे बहुत धीमी रफ्तार से जल क्षेत्र में नियमन की शुरूआत करते हैं।

इस धीमी रफ्तार वाली रणनीति की वजह से नागरिक संगठन भी आसानी से यह नहीं समझ पाते हैं कि नए कानूनों का आखिर तक पहुँचते-पहुँचते दरअसल कितना विकराल असर होता है। इसलिए 'इंतजार और निगरानी' की इस प्रवृत्ति से काफी नुकसान हो सकता है। इसके बजाए यह जरूरी है कि इस मुद्दे को तत्काल प्राथमिकता में शामिल कर जनता के हक में जवाबी कार्रवाई तेज की जाए।

●●●

5

उत्तर प्रदेश की कार्यशाला का कार्यवृत्त

उद्घाटन सत्र

(सत्र संचालन - श्री पुष्पेन्द्र भाई)

उत्तरप्रदेश में जल नियामक आयोग के प्रभावों पर गाँधी भवन, लखनऊ, (उ०प्र०) में 3 दिसंबर 2008 को एक कार्यशाला आयोजित की गई थी। कार्यशाला का आयोजन 'प्रयास' और 'मंथन' द्वारा किया गया था जिसके पहले सत्र की शुरूआत सहभागियों के परिचय से हुई। उसके बाद कार्यक्रम की भूमिका रखते हुए मंथन अध्ययन केन्द्र के **श्री रेहमत** ने कहा कि अंतरर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों की शर्तों के तहत पानी के क्षेत्र में भी नीतिगत बदलाव किए जा रहे हैं। ये बदलाव उत्तरप्रदेश या किसी एक राज्य तक सीमित नहीं हैं बल्कि देश के लगभग हर राज्य में यह प्रक्रिया जारी है। आम जनता पर इससे पड़ने वालें प्रभावों को समय रहते समझने की आवश्यकता है। उत्तरप्रदेश के पूर्व महाराष्ट्र और अरूणाचल प्रदेश में जल नियामक आयोग संबंधी कानून बनाये जा चुके हैं। मध्यप्रदेश में भी कानून का प्रारूप तैयार है और यह कभी भी कानून का रूप ले सकता है। **'मंथन'** और **'प्रयास समूह**' चाहते हैं कि इस कानून के संबंध में जनमत बनें।

क्षेत्र सुधार के कर्ज की राजनीति पर विचार व्यक्त करते हुए 'मंथन' के **श्री गौरव द्विवेदी** ने कहा कि वित्तीय एजेंसियों द्वारा नब्बे के दशक के पूर्व तक दिए जाने वाले कर्ज परियोजना आधारित होते थे। अब इन कर्जों के साथ पूरे क्षेत्र में बदलाव (सुधार या रिफार्म) की शर्तें लादी जाती हैं। इसी प्रकार के कर्जों की शर्तों के तहत बैंक, बीमा, स्वास्थ्य, शिक्षा, खेती, परिवहन, पानी आदि हर क्षेत्र में बदलाव आ रहे हैं।

इसे समझने के लिए 20-30 वर्ष पीछे मुड़कर देखते हैं, जब विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम शुरू किया था। इसके तहत देशों से अपने बाजार खोलने तथा सार्वजनिक सेवाओं के निजीकरण को प्रमुखता देने आदि की शर्तें रखी थी। इससे सेवाओं की कीमतें काफी बढ़ गई थी। इस कारण अर्जेन्टाईना में ब्यूनस आयर्स, कोचाबांबा सहित पूरे लेटिन अमेरिका में ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम का कड़ा विरोध हुआ।

इन अनुभवों के बाद विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को जब महसूस हुआ कि देशों पर दबाव डालकर ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम लागू करवाना कठिन है तो फिर 'क्षेत्र सुधार' का एजेण्डा आगे बढ़ाया गया। इसके तहत राजकोषीय घाटा कम करने के नाम पर आवश्यक सेवाओं के निजीकरण की वकालत की गई है। निजीकरण को आगे धकेलने हेतु नीतिगत और संस्थागत बदलाव किए जा रहे हैं। जल नियामक आयोग कानून भी इसी श्रृंखला की एक कड़ी है। ये नियामक आयोग पानी का बाजार खड़ा करने में मदद करेंगें। अब पूँजीवाद के बजाय नवउदारवादी व्यवस्था की बात कही जा रही है, जिसमें सरकार की भूमिका सिर्फ फेसिलिटेटर के रूप में सीमित कर दी गई है। सेवा उपलब्ध करवाना अब सरकार की जिम्मेदारी नहीं रह गई है।

देश के 17-18 राज्यों में विश्व बैंक ने सेक्टर रिफार्म या क्षेत्र सुधार के कर्ज दिए हैं। इन कर्जों की शर्तें हर राज्य में समान हैं जबकि एक ही राज्य की सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक स्थितियाँ काफी भिन्न है। इन कर्जों में विश्व बैंक, एडीबी, डीएफआईडी, यूएसएड, जेबीआईसी के साथ पानी का धंधा करने वाली अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों और सलाहकारों की भूमिका है। इनका कहना हैं कि बुनियादी सेवाओं का सुधार सार्वजनिक क्षेत्र के बस की बात नहीं है।

इन कर्जों के संबंध में राज्य सरकारों की कोई हैसियत ही नहीं है। ये कर्ज एक सुनियोजित नीति के तहत थोपे जाते हैं। सलाहकारों की अध्ययन रिपोर्टें सेक्टर रिफार्म को रामबाण औषधि के रूप में प्रस्तुत करती है। कर्ज स्वीकृत करवाने में उन नौकरशाहों की निर्णायक भूमिका होती है जो विश्व बैंक की नौकरी कर वापस सरकार में लौटते हैं। विश्व बैंक की नौकरी के दौरान उन्हें मोटी तनख्वाह देकर इस बात की ट्रेनिंग दी जाती है कि वापस सरकार में लौटकर उन्हें किस प्रकार वित्तीय एजेंसियों के एजेण्डे को आगे बढ़ाना है। वर्तमान में सरकार में शामिल शीर्ष राजनेता और नौकरशाह किसी न किसी रूप में लम्बे समय तक इन वित्तीय एजेंसियों से जुड़े रहे हैं।

'तरूण भारत संघ' के **श्री राजेन्द्र सिंह** ने कहा कि आजादी के बाद रिफार्म शब्द एक अच्छा संदेश देता था लेकिन आज का रिफार्म भयानक है। जल का अतिदोहन रोकने तथा इसके समानतापूर्ण बँटवारे के नाम पर पानी के निजीकरण की प्रक्रिया जारी है। पानी का निजीकरण रोकने के लिए बड़ी कंपनियों को रोकना होगा। पानी पर सबका समान अधिकार होना चाहिए। इसकी निगरानी समुदाय के स्तर पर भी आसानी से की जा सकती है।

जब राजस्थान की जल नीति बन रही थी तो हमने मुद्दा उठाया कि पानी राज्य का विषय है, इसलिए जल नीति राज्य के लोगों की भावनाओं के अनुरूप होनी चाहिए। इसके लिए हमने मानव के पीने के पानी को पहली प्राथमिकता, मानव के जीवन में सहायक पशुओं को दूसरी, खाद्यान्न पैदा करने वाली खेती को तीसरी, अन्य खेती को चौथी तथा पर्यावरण हेतु पानी को पाँचवी प्राथमिकता दी। हमने माँग की कि पानी के बाजारीकरण के बजाय इसका सामुदायीकरण होना चाहिए। यदि राज्य इसके प्रबंधन की जिम्मेदारी नहीं ले सकता तो समुदाय को यह जिम्मेदारी दी जाए। 5 वर्ष के बाद हाल ही में आई राजस्थान की प्रारूप जल नीति में प्राथमिकताओं का क्रम वही है जो हमने सुझाया था।

नियामक आयोग के प्रभावों की धार भोंथरी करने के लिए राज्य की जल नीतियों को प्रभावित करने की आवश्यकता है। पानी की लायसेंसिग नहीं होना चाहिए। इसके बजाय निश्चित क्षेत्र में वाटर टेबल तय कर दिया जाना चाहिए। जिस स्तर तक गाँव का किसान पानी ले सकता है कंपनियों को भी उसी स्तर तक ही पानी लेने का अधिकार होना चाहिए। जो जितना पानी लेता है उसकी जिम्मेदारी कम से कम उतने पानी के रिचार्ज की होनी चाहिए।

सारे देश में एक जैसा पानी का प्रबंधन नहीं हो सकता। जल नीति में स्थानीय समुदाय के सामाजिक ताने-ताने और और उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति के साथ भू-सांस्कृतिक विविधताओं का सम्मान किया जाना चाहिए। इसलिए इस समय नीति निर्माताओं को इस बात के लिए बाध्य किए जाने की जरूरत है कि वे भू-सांस्कृतिक क्षेत्रों के आधार पर जल नीतियाँ बनाएँ जिसमें स्थानीय समुदाय और पारिस्थिकी का ध्यान रखा जाए।

भारत की नदियों पर अतिक्रमण, शोषण और प्रदूषण के खतरे हैं। जिनके कारण देश में नदियाँ मर रही है, बाढ़ और सुखाड़ की आपदाएँ पैदा हुई। ये आपदाएँ पानी का व्यापार करने वाली कंपनियों के लिए फायदे का सौदा है। मौजूदा नीतियाँ इसी को ध्यान में रखकर बनाई जा रही है ताकि पानी का बाजारीकरण किया जा सके और जल संसाधनों को निजी हाथों में सौंपा जा सके। लेकिन हमें सावधान रहना है।

आजादी बचाओ आंदोलन के **श्री मनोज त्यागी** के अनुसार यहाँ की अधिसंख्य जनसंख्या खेती पर निर्भर है। प्रदेश के सिंचाई मंत्री नसीमुद्दीन सिद्दीकी ने विश्व बैंक की भाषा में पानी का दुरूपयोग होने की बात कहीं है। उनका यह इशारा किसानों की ओर था। इस दुरूपयोग को रोकने हेतु उन्होंने जल नियामक कानून की अनिवार्यता जाहिर की।

किसानों की सिंचाई के लिए हरिद्धार से कानपुर तक आने वाली अपर गंगा नहर को मुरादनगर के पास रोक कर पानी को दिल्ली में ले जाने हेतु एक बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनी को ठेका दिया गया था। इस पानी का बड़ा हिस्सा पार्क, होटल, मॉल्स आदि के लिए दिया जाना था। खेती के हिस्से का पानी गैर कृषि कार्यों हेतु अंतरित कर दिया गया था। नियामक आयोग के बाद ऐसा हस्तांतरण और आसान हो जायेगा। किसानों के हिस्से का पानी उद्योगों और शहरों के लिए चला जायेगा।

उत्तरप्रदेश में बनारस, हाथरस, बलिया और गाज़ियाबाद में कोका कोला कंपनी के खिलाफ आंदोलन जारी हैं। इस लड़ाई का मुद्दा यह है कि पानी पर अधिकार ग्राम समुदाय का है या कंपनियों का। पानी पर हक की इस लड़ाई का फैसला निजी कंपनियों के पक्ष में करने में नियामक कानून का इस्तेमाल किया जाएगा।

पानी की लड़ाई उसी व्यापक लड़ाई का ही हिस्सा है, जिसमें जमीन, जंगल, खदान, खेती, खुदरा व्यापार, छोटे उद्योग, बैंक, बीमा आदि सभी का निजीकरण किया जा रहा है। इस मामले में भारत सरकार विश्व व्यापार संगठन, बहुराष्ट्रीय निगमों, विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के एजेंट की भूमिका निभाते हुए देशवासियों पर ऐसे कानून थोप रही है। सरकार की इस नीति के खिलाफ

तुरन्त साझे और कड़े संघर्ष की जरूरत है। यदि हमने देर की तो पूरा उत्तरप्रदेश पानी की मण्डी में तब्दील हो जायेगा और हमारी लड़ाई कठिन हो जाएगीं

सत्र संचालक की टिप्पणी

विश्व बैंक ने संसाधनों के निजीकरण के बीज उत्तरप्रदेश में अपने पहले कर्ज के साथ 1961 में बो दिए थे। बुंदेलखण्ड में विश्व बैंक समर्थित चकबंदी के दुष्परिणाम 40 वर्ष के बाद दिखाई दे रहे हैं। पहले समाज का अपना जल प्रबंधन था। पानी का संकट होते हुए भी कभी पलायन नहीं होता था। लोग मरते नहीं थे। लेकिन पिछले 5 वर्षों में बुंदेलखण्ड में करीब 5 हजार लोगों को आत्महत्या करनी पड़ी। गाँवों से 50-60% तक लोग पलायन कर गए हैं। इसी नीति के तहत निर्माणाधीन केन-बेतवा नदी जोड़ परियोजना भी क्षेत्र के लिए अभिशाप बनेगी। सेक्टर रिफार्म का ध्येय वाक्य है - 'सबका पानी कुछ के लिए'।

विचार सत्र

(सत्र संचालन - श्री आर० पी० साही)

'प्रयास समूह' के **श्री सुबोध वागले** ने बताया कि स्वायत्त नियामक तंत्र की शुरूआत 19 वीं सदी के अंत में अमेरिका में हुई थी। उस समय गेहूँ और मक्का के परिवहन का काम रेल्वे से होता था, जिसे निजी कंपनियाँ संचालित करती थी। एकाधिकार के कारण ये कंपनियाँ मनमाना भाड़ा वसूलती थी। जब ऐसा महसूस होने लगा कि निजी कंपनियाँ समाज को बंधक बना रही है तो निजी कंपनियों पर अंकुश लगाने के लिए नियामक तंत्र की स्थापना हुई।

सब्जी, दूध और अखबार वाले अनेक हो सकते है। लेकिन बुनियादी सुविधाओं यथा रेल्वे, बिजली, पानी का सेवाप्रदाता एक ही होता है। सेवाप्रदाता अधिक होने पर बिजली के लिए अलग-अलग पारेषण लाईनें होनी चाहिए। पानी में हर सेवाप्रदाता की सप्लाई लाईनें अलग होना संभव नहीं है। इस प्रकार एक क्षेत्र में किसी सेवाप्रदाता का एकाधिकार हो जाता है। यह एकाधिकार किसी कानून से कायम नहीं होता है बल्कि स्वत: हो जाता है। इसे प्राकृतिक एकाधिकार कहा जाता है। एकाधिकार में अधिक से अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। समाज पर ऐसी नौबत न आए इसलिए अमेरिका में सेवा की दर और सेवा की गुणवत्ता के साथ ही सेवाप्रदाता पर नियंत्रण हेतु नियामक तंत्र का गठन किया गया।

हमारे यहाँ बिल्कुल उल्टा हो रहा है। आजादी के पहले बुनियादी सेवा क्षेत्र का आकार बहुत छोटा था। बाद में बुनियादी सेवाओं की जिम्मेदारी राज्य के हिस्से में आ गई और इन क्षेत्रों में राज्य का प्राकृतिक एकाधिकार कायम हो चुका है। लेकिन राज्य का उद्देश्य मुनाफा कमाना नहीं होने के कारण इस पर नियमन की जरूरत महसूस नहीं हुई। लेकिन 90 के दशक से शुरू हुए आर्थिक सुधारों से निजीकरण को बढ़ावा मिला। इसलिए निवेशकों को इस बात के लिए आश्वस्त किया गया कि राज्य कोई ऐसे निर्णय नहीं लेगा जिससे कि उनका निवेश और मुनाफा प्रभावित हो। यह तभी संभव है जब राज्य

को इस मामले से अलग कर दिया जाए। अत: स्वायत्त नियामक आयोगों का गठन किया जा रहा है ताकि राजनैतिक दखलअंदाजी से परे निवेशकों का मुनाफा सुनिश्चित किया जा सकें। इस प्रकार नियामक कानून का प्रमुख उद्देश्य राज्य और निजी निवेशकों के बीच एक बैरियर का काम करना है।

हमारे देश में नियामक कानून बनाने का आधार क्या है? आजादी के बाद बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र में राज्य को असीमित अधिकार दिए गए। बिजली बोर्ड, जल बोर्ड आदि का कारोबार यानी निर्णय, क्रियांवयन, नियमन आदि सब राज्य के हाथ में था। निजीकरण के पैरोकारों का कहना है कि राज्य के असीमित अधिकार ही बुनियादी सुविधाओं की बदहाली का कारण है। राज्य के हस्तक्षेप के कारण सुविधाओं का नौकरशाहीकरण हो गया है और इन पर लोगों के बजाय निहित तत्वों का कब्जा हो चुका है। पारदर्शिता, जवाबदेही खत्म हो गए। इन बोर्ड सदस्यों की चयन प्रक्रिया निरर्थक हो चुकी है। इसलिए सेवा प्रदाय का काम राज्य से अलग किया जाए। संचालन और संधारण लोगों के हाथ में सौंपा जाए। राज्य के अधिकारों को कम किया जाए।

नियामक आयोग में नौकरशाह, तकनीकी और आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ शामिल रहेंगें। इसमें राज्य अथवा समाज के प्रतिनिधियों के लिए कोई स्थान नहीं है। वित्तीय एजेंसियों का कहना है कि अभी तक राजनैतिक और सामाजिक प्राथमिकताओं के आड़ में आर्थिक और तकनीकी पक्षों को नकारा गया। इसलिए नियामक आयोग में अब इसकी जरूरत नहीं हैं। पहले आर्थिक और तकनीकी मामलों पर ध्यान देना चाहिए।

नियामक आयोग इस पर नियंत्रण रखेगा कि जल क्षेत्र में सरकार और गैरसरकारी इकाईयाँ आर्थिक और तकनीकी जरूरतें पूरी करती है या नहीं। यह सुनिश्चित किया जाएगा कि निजी कंपनियों में राज्य का हस्तक्षेप न हो। ग्राहकों के अधिकारों का भी संरक्षण किया जाएगा। यह अर्ध न्यायिक व्यवस्था होंगी अर्थात् इसमें तथ्यों के बारे में न्यायालयों के समान कठोरता नहीं होंगी। नियामक आयोग की भूमिका एडजूसीकेटरी अर्थात् मध्यस्थ की होंगी। इसके सामने जो तथ्य प्रस्तुत किए जाएँगे सिर्फ उन्हीं के आधार पर निर्णय लिए जाएँगें। जो तथ्य सामने नहीं आयेंगें उन्हें सामने लाने की जिम्मेदारी इनकी नहीं होंगी। ऐसे में जिनके पास तकनीकी भाषा में अपना पक्ष रखने का कौशल अथवा महँगे विशेषज्ञों की सेवाएँ लेने की क्षमता नहीं हैं, उनके साथ न्याय होने की संभावना अत्यंत क्षीण है। नियामक आयोग अपने फैसले पानी को 'बुनियादी अधिकार' के बजाय 'वस्तु' मानते हुए करेंगें।

नियामक तंत्र के बारे में कहा गया है कि यह पारदर्शिता, सहभागिता और जवाबदेही से काम करेगा। लेकिन, ये पारदर्शिता, सहभागिता और जवाबदेही लोगों के प्रति न होकर निवेशकों के लिए होगी। आयोग की कार्यप्रणाली निवेशक हितैषी है। इस पर पूरा नियंत्रण नौकरशाहों का है। महाराष्ट्र में इसका अध्यक्ष रिटायर्ड मुख्य सचिव ही हो सकता है। इसकी चयन प्रक्रिया में भी नौकरशाहों का नियंत्रण होता है। आयोग का मात्र आर्थिक और तकनीकी दृष्टि से काम करना अराजनैतिक तथा अलोकतांत्रिक प्रक्रिया है। इससे गरीबों के हित बुरी तरह से प्रभावित होंगें।

'प्रयास समूह' के **श्री सचिन वारघड़े** ने बताया कि उत्तरप्रदेश के नियामक आयोग संबंधी कानून में नियामक आयोग को मिले अधिकारों में **जल अधिकार** (एनटाईटलमेंट) सुनिश्चित करना शामिल है। ये जल अधिकार वास्तव में पानी के उपयोग के अधिकार मात्र होंगें, मालिकाना हक नहीं। हालाँकि यह निरंतर अधिकार होगा तथा इसे कानूनी मान्यता भी होंगी। किसे कितना उपयोग अधिकार मिले यह शासन तय करेगा। महाराष्ट्र के नियामक कानून में तो इस एनटाईटलमेंट को खरीदी बिक्री योग्य माना गया है अर्थात् पानी के बाजार को कानूनी जामा पहना दिया गया है। इस बात की बहुत संभावना है कि इसी प्रकार उत्तरप्रदेश में भी नियामक कानून का उपयोग कर पानी का बाजार खड़ा किया जाएगा। एनटाईटलमेंट का निर्धारण ही पानी का बाजार खड़ा करने की पूर्व शर्त होती है। उत्तरप्रदेश के बिल की प्रस्तावना में एनटाईटलमेंट में समानता की बात अवश्य कहीं गई है लेकिन बिल में अन्दर कहीं इसका उल्लेख नहीं है।

पानी को एक सामाजिक संसाधन के रूप में देखा जाता है इसलिए नगर निकायों द्वारा लोगों की क्षमता के आधार पर जल दरें निर्धारित की जाती है। लेकिन अब कानून में पूरी लागत वसूलने का कानूनी प्रावधान किया गया है। महाराष्ट्र के कानून में मात्र संचालन एवं संधारण खर्च निकालने की बात कहीं गई है। उत्तरप्रदेश में संचालन एवं संधारण खर्च के साथ मूल्यह्रास और सब्सिडी तक सारे खर्च की वसूली का प्रावधान किया गया है। यानी लागत खर्च की पाई-पाई वसूली जायेगी।

कानून में सेवाप्रदाता और भू-जल उपयोगकर्ता दोनों के लिए लायसेंसिंग की बात कही गई है। लेकिन इसका जिक्र कानून के अंत में किया गया है। इससे संदेह होता है कि इस तथ्य को छिपाने का प्रयास किया गया है। लायसेंसिंग के कारण उत्तरप्रदेश का कानून महाराष्ट्र के कानून से निजीकरण की दिशा में एक कदम आगे है।

महाराष्ट्र में 'एकीकृत राज्य जल योजना' की स्वीकृति जन प्रतिनिधियों की समिति द्वारा देने का प्रावधान है जबकि उत्तरप्रदेश में आयोग को ही यह अधिकार दे दिया गया है। नियामक कानून में एक लाख रूपए तक के भारी जुर्माने का प्रावधान है। पानी के निजीकरण की खुली वकालत की गई है। इस कानून के काफी गंभीर परिणाम होंगें।

सत्र संचालक की टिप्पणी

बुनियादी क्षेत्र में निजी कंपनियों को बढ़ावा देने के संदर्भ में तर्क दिया जाता है कि यह सार्वजनिक क्षेत्र की जिम्मेदारी थी लेकिन उसे पूरा नहीं किया गया इसलिए अब निजीकरण के अलावा कोई रास्ता नहीं बचा है। सलाहकारों की रिपोर्टों का हवाला देकर भी इन उपायों को न्यायिक ठहराया जाता है। लेकिन अब इस बात में कोई संदेह नहीं रह गया है कि सलाहकारों की इन रिपोर्टों के उद्देश्य और उनकी अनुसंशाएँ पूर्व निर्धारित होती है। दु:ख की बात है कि आज देश में कोई राज्य ऐसा नहीं है जिसने अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों से सेक्टर रिफार्म के कर्ज नहीं लिए हों। विडम्बना यह है कि जो नियामक कानून अमेरिका में निजी कंपनियों को नियंत्रित करने के लिए बनाया गया था उसी का इस्तेमाल हमारे देश में निजी कंपनियों को संरक्षण देने में हो रहा है।

रणनीति सत्र

(सत्र संचालन - श्री संदीप पाण्डे, श्री आर० पी० साही)

श्री राजेन्द्रसिंह, तरूण भारत संघ

- उत्तरप्रदेश में जल नियामक आयोग के खिलाफ ठीक समय से गतिविधियाँ शुरू होना अच्छा संकेत है। प्रदेश के सभी 5 भू-सांस्कृतिक क्षेत्रों (उत्तराखण्ड के नीचे तराई क्षेत्र, दोआबा, बुंदेलखण्ड का पठारी क्षेत्र, अवध और बाढ़ क्षेत्र) में इस कानून को समझने-समझाने हेतु संगोष्ठियाँ/कार्यशालाएँ आयोजित की जाएँ। बाद में सामूहिक बैठक हों।
- नियामक कानून के खिलाफ दो तरफा लड़ाई लड़ें। कानून को नकारने वाले साथियों के साथ भी हमारी पूरी एकजुटता रहे ताकि सरकार को उसकी हैसियत दिखाई जा सके। साथ ही, नियामक की कमियों को सामने लाएँ और उन पर जनमत तैयार करें। नियामक का उपयोग हमें नदी जल प्रबंधन में, नदियों कों साफ रखने में हस्तक्षेप करने में तथा किसानों/कमजोर वर्गों के अधिकार सुनिश्चित करने आदि में करना चाहिए।
- उत्तरप्रदेश का जल संकल्प-पत्र तैयार हों जिसमें हम अपनी बातों को साफगोई से रखें कि पानी हमारा है। इसके सामुदायिक प्रबंधन का अधिकार हम बरकरार रखना चाहते हैं। यह अधिकार हम कंपनियों को नहीं दे सकते।
- उत्तरप्रदेश में लड़ाई लड़ने के लिए पानी की मालिकी का मुद्दा उठाना होगा। पानी का मालिक 'राज' नहीं बल्कि 'समाज' है। इसलिए नियामक आयोग केवल राज्य का नहीं हो सकता। इसमें समाज के प्रतिनिधियों की संख्या राज्य के प्रतिनिधियों से अधिक होनी चाहिए।

श्री मनोज त्यागी, आज़ादी बचाओ आंदोलन

- कार्पोरेट कॉलोनियलिज्म एक नए तरीके का उपनिवेशवाद है जो हर क्षेत्र में घुस आया है, पानी के क्षेत्र में भी। हमारी लड़ाई इसके खिलाफ है। आईएमएफ और विश्व बैंक द्वारा संचालित इस पूरी व्यवस्था को नकारने का और खदेड़ने की जरूरत है। हम इस रिफार्म को स्वीकार नहीं करते। पानी पर समुदाय का अधिकार है। समाज नियमन भी जानता हैं और प्रबंधन भी। इसके खिलाफ जनजागरण के प्रयास तेज करने होंगे।

श्री विमल भाई, माटू जन संगठन

- पूर्ण विरोध और कानून में सुधार की दो तरफा रणनीति होनी चाहिए। लेकिन इसे नकारने हेतु जोरदार प्रदर्शन जरूरी है। एनपीएम को राष्ट्रीय स्तर पर इस मुद्दे को उठाना चाहिए।
- 'प्रयास' से निवेदन है कि वह नियामक कानून के बारे में एक सरलीकृत पर्चा तैयार करें ताकि ग्रामीण समुदाय भी उसे पढ़कर समझ सकें।

- भू-सांस्कृतिक क्षेत्रों में होने वाली कार्यशालाओं हेतु जिम्मेदारी बाँटी जानी चाहिए। उत्तरप्रदेश में कार्यरत समूह क्षेत्रीय स्तर पर इसकी जिम्मेदारी लें। इसमें 'मंथन' और 'प्रयास' की भी मदद की जरूरत है।

श्री नंदलाल मास्टर, जन आंदोलनों का राष्ट्रीय समन्वय

- प्रदेश के हर क्षेत्र में एक कार्यशाला होनी चाहिए। हम चाहेंगें कि एक क्षेत्रीय कार्यशाला बनारस में भी जरूर हो।
- संकल्प पत्र जारी कर संदेश दें कि पानी आम जनता का है। इस पर किसी कानून की जरूरत नहीं है।
- जनवरी और मार्च 2009 के बीच गंगा एक्सप्रेस-वे और पानी के मुद्दे पर पदयात्रा की योजना है। प्रयास है कि 22 मार्च को विश्व जल दिवस के अवसर पर यात्रा का समापन लखनऊ में हो और नियामक कानून की होली जलाए। इसी दौरान अन्य क्षेत्रों के साथी साथी भी अलग-अलग स्थानों से ऐसी ही यात्राएँ निकालें जो 22 मार्च को लखनऊ में इकट्ठा हो।
- नियामक कानून की जिला मुख्यालयों पर होली जलाई जाए।

श्री पुष्पेन्द्र भाई, जनहित मंच

- इस बैठक के फॉलो-अप के बारे में हम उत्तरप्रदेश के साथी भी कुछ जिम्मेदारी लें। हम अपने क्षेत्रों में जाकर जल नियामक आयोग के प्रभावों से समुदायों को अवगत करवाएँ। निश्चित समयसीमा तय कर क्षेत्र में बनी समझ पर के आधार पर एक पत्रक तैयार कर 'मंथन' और 'प्रयास समूह' को भेजें। इससे इस बैठक की सार्थकता सिद्ध होगी।

श्री आर०पी० साही, इंसाफ

- सरकार अपनी जवाबदेही कम करने के लिए अपनी भूमिका बदल रही है। लेकिन हमारा मानना है कि नागरिकों को बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध करवाने की जिम्मेदारी सरकार की है जो निजी कंपनियों को अंतरित नहीं की सकती। इसलिए तय करना जरूरी हो गया है कि क्या अब भी हम रिफार्म गतिविधियों में बदलाव की बात करते रहें या फिर इसे सिरे से नकार दें।

श्री अरूण तिवारी, जल बिरादरी

- पानी यदि सरकार का नहीं है तो सरकार इसे नियंत्रित कैसे कर सकती है? पानी पर मालिकाना हक तय होना चाहिए। साथ ही आगामी लोकसभा चुनाव में पानी को लेकर एक जन घोषणा-पत्र जारी करें। घोषणा-पत्र पर उम्मीदवारों से सहमति ली जाएँ।
- उत्तरप्रदेश की नहरों में विश्व बैंक बड़ा निवेश कर रहा है। इस निवेश के पीछे की मंशा को समझाना होगा। माघ मेले के दौरान पूरा उत्तरप्रदेश आपस में जुड़ता है। गाँव समुदाय तक पहुँचने हेतु माघ मेले में कार्यक्रम किया जा सकता है।

●●●

भाग - 3

मध्यप्रदेश में बिकने को तैयार है पानी

मध्यप्रदेश में वर्तमान में क्षेत्र सुधार की दो परियोजनाएँ जारी है। एक एडीबी सहायतित 'मध्यप्रदेश शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार परियोजना' तथा दूसरी विश्व बैंक की 'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'। इन दोनों परियोजनाओं की शर्तों के तहत प्रस्तावित अधिकांश नीतिगत और संस्थागत बदलाव किए जा चुके हैं जिसके प्रभाव दिखाई देने प्रारंभ हो गए हैं। ३९.६ करोड़ डॉलर की 'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना' परियोजना की शर्तों अनुरूप राज्य में 'जल नियामक आयोग' संबंधी कानून बनाया जाना है जिसका प्रारूप तैयार किया जा चुका है। नियामक कानून अस्तित्व में आते ही यहाँ भी पानी को बाजारी जिंस में तब्दील करने का प्रयास किया जाएगा।

भाग 3

मध्यप्रदेश में बिकने को तैयार है पानी

6. मध्यप्रदेश में प्रस्तावित जल नियामक आयोग के संभावित प्रभाव
7. म०प्र० शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण उन्नयन परियोजना
8. म०प्र० के प्रस्तावित जल नियामक आयोग के प्रभावों पर कार्यशाला एवं आमसभा

6

मध्यप्रदेश में प्रस्तावित जल नियामक आयोग के संभावित प्रभाव

मध्यप्रदेश में एडीबी के कर्ज से **'मध्यप्रदेश शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार परियोजना'** तथा विश्व बैंक के कर्ज से **'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'** संचालित है। इन दोनों परियोजनाओं का कर्ज **सेक्टर रिफार्म** के तहत लिया गया है जिससे कर्जों की शर्तों के तहत किये जाने वाले नीतिगत और संस्थागत बदलावों का आम जनता और जलक्षेत्र पर व्यापक और दूरगामी असर होगा।

एडीबी सहायतित **'मध्यप्रदेश शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार परियोजना'** से प्रदेश के चार शहरों-इंदौर, भोपाल, ग्वालियर और जबलपुर-में जलापूर्ति एवं जल-मलनिकास तंत्र के सुधार का दावा किया गया है। इस हेतु कुल योजना खर्च 30.35 करोड़ डॉलर में से 20 करोड़ डॉलर एडीबी कर्ज के रूप में प्रदान करने वाला था तथा शेष राशि प्रदेश सरकार तथा संबंधित शहरों को जुटानी थी। लेकिन डॉलर के अवमूल्यन निर्माण सामग्री के दाम बढ़ने के कारण सरकार की माँग पर 7.10 करोड़ डॉलर का पूरक कर्ज उपलब्ध करवाया गया है, जिससे इस परियोजना की लागत बढ़कर 37.45 करोड़ डॉलर हो गई है। इस कर्ज की शर्तों में जल प्रदाय व्यवस्था को व्यापारिक सिद्धांतों पर चलाया जाना शामिल है।

विश्व बैंक सहायतित **'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'** हेतु प्रदेश सरकार ने 39.6 करोड़ डॉलर का कर्ज लिया है। हालांकि इस कर्ज का उपयोग मुख्यत: पाँच कछारों (चंबल, सिंध, बेतवा, केन और टोंस) में किया जायेगा लेकिन इसकी शर्तों के तहत किये जाने वाले नीतिगत बदलावों से पूरे राज्य के जल क्षेत्र में आमूलचूल बदलाव होगा। इस कर्ज की एक शर्त के अनुरूप राज्य में **'जल नियामक आयोग'** (State Water Regulatory Commission) संबंधी कानून बनाना होगा।

प्रस्तावित जल नियामक आयोग

विश्व बैंक ने **'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना'** हेतु सेक्टर रिफार्म या क्षेत्र सुधार के तहत कर्ज दिया है। विश्व बैंक द्वारा प्रदेश सरकार के समक्ष रखी गई शर्तो में से एक है - जल दर नियामक आयोग का गठन किया जाना। आयोग के गठन से सिंचाई दरों का निर्धारण सरकार के अधिकार क्षेत्र से निकलकर नियामक तंत्र के अधीन हो जाएगा।

विश्व बैंक के परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज के अनुसार जलक्षेत्र को आर्थिक स्वावलंबी बनाने हेतु इसकी लागत/राजस्व की समीक्षा, निगरानी तथा दरों के निर्धारण हेतु एक स्वायत्त जलदर नियामक आयोग का गठन किया जाएगा। दस्तावेज में कहा गया है कि जलदर नियामक आयोग के गठन में परियोजना (सरकार) मदद करेगी।[1] विश्व बैंक सहायतित इस परियोजना के संचालन हेतु विशेष रूप से गठित **'परियोजना क्रियान्वयन एवं संयोजन इकाई' (पाईकू PICU)** द्वारा **'मंथन'** को दी गई जानकारी के अनुसार सरकार इस मामले में काफी आगे बढ़ चुकी है। अप्रैल 2008 तक विश्व बैंक की 11 शर्तें पूरी की जा चुकी थीं तथा शेष 3 शर्तों पर प्रगति जारी है।[2]

विश्व बैंक का दस्तावेज खुलासा करता है कि 'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना' का रूपांकन निजी-सार्वजनिक भागीदारी (निजीकरण के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला जुमला) लागू करने को ध्यान में रखकर किया गया है तथा जलक्षेत्र में सुधार का मुख्य आधार यही निजीकरण होगा।[3] परियोजना का प्रारंभिक लक्ष्य 1 मध्यम और 25 छोटी सिंचाई योजनाओं का निजीकरण करना है।[4] जल उपभोक्ता समूह, पंचायतें अथवा निजी कंपनी किसी को भी ये योजनाएँ सौंपी जा सकती है।

सिंचाई तंत्र के निजीकरण हेतु नीतिगत बदलावों की श्रृंखला में **जल नियामक आयोग'** के गठन संबंधी कानून का निर्माण भी शामिल है। शर्त के अनुसार वैसे तो प्रदेश सरकार को इस कानून का प्रारूप 31 दिसंबर 2005 तक[5] तैयार करना था, जो प्राप्त जानकारी के अनुसार अब तैयार है तथा इसे अंतिम रूप देने हेतु मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में अगस्त 2007 में एक उच्चाधिकार समिति (High Power Pane) गठित की जा चुकी है।[6]

इन प्रस्तावित बदलावों से आशंका है कि जीवन के लिए जरूरी संसाधन पानी मात्र बाजारी जिंस में तब्दील होकर रह जाएगा तथा उस पर समाज का अधिकार नकारा जा सकता है। इस बदलाव का सबसे बुरा असर खेती-किसानी पर पड़ेगा। वर्तमान में किसानों को सिंचाई हेतु बिजली बिल भरने में काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है। स्वयं के कुओं-नलकूपों और सार्वजनिक नदी-नालों से सिंचाई करने वाले किसानों को बिजली के साथ पानी का बिल भी चुकाना पड़ेगा तब क्या होगा? उल्लेखनीय है कि प्रदेश की भौगालिक सीमाओं में उपलब्ध सारा जल संसाधन जल नियामक आयोग के अधीन हो जाएगा तथा वही पानी की दरें तय करेगा।

---

1 परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज पृष्ठ–3 और 4

2 सूचना का अधिकार कानून के तहत 'मंथन' को प्राप्त जानकारी

3 परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज पृष्ठ–7

4 परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज पृष्ठ–9

5 कर्ज की छटवीं शर्त, परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज पृष्ठ–7

6 Free Press, इंदौर, दिनांक 31 अगस्त 2007

विश्व बैंक ने स्वीकार किया है कि नियामक व्यवस्था का उद्देश्य जल क्षेत्र को राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त करवाना है।[7] विश्व बैंक के इस कथन से अंदेशा है कि नियामक व्यवस्था का उपयोग निजी कंपनियों को पानी के क्षेत्र में प्रवेश दिलाने हेतु किया जाएगा। ऐसे में गरीब और कमजोर तबके के लोग जो चुनाव के माध्यम से 5 वर्षों में केवल एक बार ही नीतिगत मामलों में प्रभाव डाल पाते है, वे अपने इस अधिकार से भी वंचित हो जायेंगे।

विश्व बैंक की चौथी शर्त के अनुसार 12 दिसंबर 2005 को राज्य जल संसाधन एजेंसी (SWaRA) का भी गठन किया जा चुका है जो अधिकतम उपयोग प्रबंधन के आधार पर विभिन्न सेक्टरों के मध्य जल अधिकारों का आवंटन करेगी।[8] महाराष्ट्र के आयोग को **'महाराष्ट्र जल संसाधन नियमन प्राधिकरण'** नाम देकर व्यापक बनाया गया है जिसे जल अधिकारों के आवंटन की भी पात्रता है। चूँकि देश में सबसे पहला जल नियामक आयोग महाराष्ट्र में गठित हुआ है इसलिए अन्य राज्य इसे मॉडल के रूप में देख रहे हैं। संभावना है कि या तो मध्यप्रदेश में 'राज्य जल संसाधन एजेंसी' के अधिकार भी जल नियामक आयोग में समाहित कर दिए जाएँ या फिर SWaRA द्वारा विश्व बैंक की शर्तों के तहत बाजार के सिद्धांतों पर पानी बेचने का काम किया जाए।

विश्व बैंक की शर्तें ऐसी है कि लोकतांत्रिक तरीके से निर्वाचित सरकारें भी इनमें बदलाव नहीं कर पाएगी। कर्ज की अंतिम शर्त के अनुसार इस परियोजना के अंतर्गत किसी भी कार्य पर विश्व बैंक की सहमति के बगैर कोई निर्णय नहीं लिया जाएगा। विश्व बैंक से कार्ययोजना स्वीकृत होने के बाद ही किसी योजना पर अमल प्रारंभ किया जा सकेगा।[9]

देश में सूचना का अधिकार कानून लागू होने के बावजूद इस कर्ज से संचालित परियोजना में पारदर्शिता का अभाव है। जिस बदलाव से सारा प्रदेश और खासकर दो तिहाई से अधिक आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाला किसान समुदाय सीधे प्रभावित हो रहा हो उस परियोजना के बारे में पर्याप्त पारदर्शिता जरूरी है। विश्व बैंक के परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज के मुखपृष्ठ पर ही बॉक्स में इस बात की चेतावनी दे दी गई है कि इस दस्तावेज का उपयोग प्राप्तकर्ता (सरकार) द्वारा केवल अधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में किया जाए। तथा इसकी विषयवस्तु को विश्व बैंक की सहमति के बगैर किसी के समक्ष प्रकट नहीं किया जाए।[10] कर्ज दस्तावेज के अनुसार जल नियामक आयोग का कार्य राज्य में पानी की थोक दरों का निर्धारण करना है[11] लेकिन खुदरा दरें भी तो थोक दरों से ही तय होंगी।

●●●

---

7 स्रोत–परियोजना सूचना दस्तावेज, पृष्ठ–10

8 सूचना का अधिकार कानून के तहत 'मंथन' को प्राप्त जानकारी

9 स्रोत–परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज, पृष्ठ–iv

10 स्रोत–परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज का मुखपृष्ठ पर अंकित चेतावनी

11 स्रोत–परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज, पृष्ठ–vi

7

म०प्र० शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण उन्नयन परियोजना

एडीबी के कर्ज से प्रदेश के 4 शहरों - इंदौर, भोपाल, ग्वालियर और जबलपुर - में संचालित इस योजना से जलापूर्ति एवं जल-मलनिकास तंत्र का नियोजन-प्रबंधन, सुदृढ़ीकरण कर इसे अधिक प्रभावी, पारदर्शी और स्थायी बनाने का दावा किया गया है। पहले कुल योजना खर्च 30.35 करोड़ डॉलर में 20 करोड़ डॉलर एडीबी से कर्ज के रूप में मिलने वाले थे तथा शेष राशि प्रदेश सरकार तथा संबंधित शहरों को खर्च करनी थी। लेकिन डॉलर के अवमूल्यन के कारण सरकार ने अतिरिक्त 7.10 करोड़ डॉलर पूरक कर्ज की माँग की थी जिससे इस परियोजना की लागत बढ़कर 37.45 करोड़ डॉलर हो गई है। यू०एन० हेबिटेट द्वारा दिये जा रहे 5 लाख डॉलर परियोजना लागत के हिसाब तो उपेक्षणीय है लेकिन इसका रणनैतिक महत्व बहुत अधिक है। 10.5% की ब्याज दर से कर्ज को 25 वर्षों में लौटाना होगा।

पहले इस योजना में रतलाम और उज्जैन भी शामिल थे। लेकिन रतलाम नगरनिगम ने कर्ज की ऊँची ब्याज दर तथा सलाहकारों पर 5 करोड़ 40 लाख रूपये की बड़ी राशि खर्च करने पर असहमति जताई थी।

एडीबी के कर्ज दस्तावेज के अनुसार योजना से संबंधित शहरों की संपूर्ण आबादी के लाभान्वित होने तथा मलिन बस्तियों में रहने वाले अत्यंत गरीब तथा वंचित तबको की स्थिति में सुधार होगा। लेकिन इसी दस्तावेज में आगे स्पष्ट किया गया है कि इन बस्तियों की सिर्फ सीमा तक ही पानी पहुंचेंगा। इसका अर्थ है कि 2001 की जनगणना के अनुसार इन शहरों में रहने वाले एक चौथाई अत्यंत गरीब लोगों से इस योजना और योजनाकारों को कुछ लेनादेना नहीं है। पूरक कर्ज के

> एडीबी द्वारा सन् 2000 में एशिया के निजीकृत आपूर्ति वाले 10 शहरों में किये गये अध्ययन में पाया गया था कि निजीकरण से अधिकतर स्थानों पर पानी के दाम बढ़ गए। लेकिन सबसे बड़ी बात तो यह थी कि इस प्रक्रिया में पारदर्शिता और जनभागीदारी का कोई स्थान नहीं था। एडीबी द्वारा आदर्श घोषित मनीला (फिलीपिन्स) की निजीकृत जल आपूर्ति व्यवस्था भी औंधे मुँह गिर गई। यहाँ निजीकरण के पूर्व 1997 में पेयजल की दर 8.78 पिसो प्रति घनमीटर थी। लेकिन ठेका लेते ही मेनिलाड कंपनी द्वारा इसे 16.46 पिसो प्रति घनमीटर कर दिया तथा बाद में 30 पिसो प्रति घनमीटर की माँग की। माँग नहीं मानी जाने पर कंपनी ने काम बंद कर दिया। सरकार को मजबूरन न सिर्फ व्यवस्था पुन: संभालनी पड़ी बल्कि कंपनी का सारा कर्ज भी खुद अपने माथे लेना पड़ा। इसके बावजूद कंपनी ने सरकार पर 1500 करोड़ रूपये के हर्जाने का दावा ठोंक दिया। एडीबी फिर ये यही इतिहास प्रदेश के शहरों में दोहराने जा रही है लेकिन क्या हम इसके परिणाम भोगने को तैयार है?

पहले 1365 करोड़ रुपए की इस योजना में करीब साढ़े 31 करोड़ ही मलिन बस्तियों के लिए थे जबकि चंद सलाहकारों के लिए करीब 77 करोड़ रुपए का प्रावधान था। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि योजना में केवल 82 मलिन बस्तियाँ ही शामिल है।

एडीबी के अनुसार सार्वजनिक जलस्रोतों से 50 फीसदी पानी बर्बाद हो जाता है इसलिए सार्वजनिक नलों को खत्म करने की शर्त रखी गई है। वर्तमान में चालू सार्वजनिक जलस्रोत समुदाय की समिति जिम्मेदारी ले (टेक्स चुकायें) तो ही चालू रह सकते हैं। साथ ही, शत प्रतिशत मीटरीकरण तथा पूरी कीमत वसूलने की बात कही है। भुगतान नहीं होने पर कनेक्शन काटने का प्रावधान है। स्थानीय निकायों से जल कर और संपत्ति करों के युक्तियुक्तकरण (इसका अर्थ दरें बढ़ाने से है) की शर्त है। केवल इतना ही नहीं किस शहर में कीतनी दरें बढ़ायें यह भी बैंक ने ही तय कर दिया है।

जल-मलनिकास कर आरोपित करना जरूरी होगा। इस कर की दरें ग्वालियर एवं जबलपुर में पानी के बिल की 40 प्रतिशत, भोपाल में 30 प्रतिशत एवं इंदौर में 25 प्रतिशत अतिरिक्त होगी। कर वसूली दर को 2 - 3 गुना बढ़ाने हेतु इसके निजीकरण का सुझाव है। साथ ही *'कर्ज वापसी शुल्क'* भी शुरू किया जायेगा। बड़ी दर वृद्धि राजनैतिक दृष्टि से कठिन काम है इसलिए संबंधित शहरों में राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त स्वायत्त एवं जवाबदेह जल और मलनिकास विभाग बनाये जाने की शर्त रखी गई है।

एडीबी की शर्तें पत्थर की लकीर है। एडीबी की सहमति के बगैर कर्ज की किसी भी शर्त को मध्यप्रदेश सरकार या स्थानीय निकाय द्वारा बदला नहीं जा सकेगा। ठेकेदारों और सलाहकारों की नियुक्ति भी बगैर एडीबी की सहमति के नहीं होगी।

उपरोक्त के आधार पर स्पष्ट है कि यह योजना पानी के निजीकरण का प्रथम सोपान है जिसका मकसद जल क्षेत्र को फायदे का धंधा बनाना मात्र है। एक बार जब धंधा चल जायेगा तो पानी बेचने का काम देशी-विदेशी कम्पनियो को सौंप दिया जायेगा।

शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण उन्नयन परियोजना के प्रभाव

सार्वजनिक नलों का खात्मा – इंदौर नगर निगम ने बजट प्रस्ताव क्र०-3, दिनांक 26 अप्रैल 2006 में कहा कि है नया सार्वजनिक (बड़ा) नल कनेक्शन नहीं लगाया जाए तथा पहले से लगे सार्वजनिक नलों को उन लोगों के नाम पंजीबद्ध किये जाएँ जिनके घरों के सामने ये नल लगे हैं। और इन्हीं लोगों के नाम से बिल जारी किये जाएँ। इंदौर नगरनिमग ने पिछले 5 वर्षों में एक भी सार्वजनिक नल नहीं लगाया है।

जलदर – इंदौर निगम के बजट प्रस्ताव क्र० 6, दिनांक 16 मई 2006 के अनुसार जल कर नहीं चुकाने वालों के कनेक्शन काट दिए जाए और उन्हें बकाया राशि वसूलने के बाद भी पुनः बहाल न किया। उनसे पूरा कनेक्शन शुल्क 2,500 वसूलकर नया कनेक्शन दिया जाए। इस प्रावधान को लागू कर दिया गया है।

इसी प्रस्ताव में उन लोगों से भी वसूली का प्रस्ताव है जो नगरनिगम की सेवाएँ नहीं लेते। निजी कुओं, नलकूपों सहित अन्य स्रोतों से पानी लेने वाले ऐसे नागरिकों से सामान्य घरेलू नल कनेक्शन के बराबर बिल वसूला जाना है।

कचरा प्रबंधन – वित्त वर्ष 2007-08 से कचरा प्रबंधन शुल्क भी प्रारंभ किया गया है। हालांकि अभी इसे व्यावसायिक प्रतिष्ठानों तक ही सीमित रखा गया है जो कम से कम 1,000 रुपए/माह और अधिकतम 30,000 रुपए/माह होगा। इसे सभी परिवारों पर आरोपित किया जाएगा।

निजीकरण की राह – इंदौर शहर के कुछ हिस्सों में सफाई व्यवस्था, कचरा संग्रहण और अनाकलित संपत्तियों के आंकलन का काम निजी एजेंसियों से करवाने का प्रस्ताव किया गया है।

बस्तियों की स्थिति – इंदौर में परियोजना को प्रारंभ हुए करीब साढ़े तीन वर्ष से अधिक समय गुजर चुका है लेकिन बस्तियों को इसके अभी कोई लाभ नजर नहीं आ रहे हैं। बस्तियों में काम करने वाली इंदौर की संस्था ''दीनबंधु'' ने शहर की 10 बस्तियों का अध्ययन कर पाया कि वहाँ परियोजना के कोई लाभ नहीं पहुँचे है। इन बस्तियों में पेयजल की सुविधा या तो है ही नहीं या फिर है भी तो न के बराबर है। पेयजल के लिए इन बस्तियों को निजी टेंकरों अथवा 2 - 3 किमी दूर के खेतों पर निर्भर रहना पड़ता है। इंदौर की बस्तियों में कार्यरत् **'दीनबंधु'** द्वारा सर्वेक्षित 1400 की जनसंख्या वाली भीमनगर बस्ती मात्र 2 सार्वजनिक नल है जिनमें एक दिन छोड़कर जलप्रदाय होता है।

इंदौर का नर्मदा तृतीय चरण – इंदौर में एडीबी परियोजना का एक प्रमुख घटक नर्मदा तृतीय चरण है। इसकी पाईपलाईन तथा सुरंग निर्माण हेतु 254.59 करोड़ रुपए का टेण्डर 20 अप्रैल 2007 को खोला गया। 23 जून 2007 को प्रदेश के मुख्यसचिव की अध्यक्षता वाली साधिकार समिति को इस योजना के टेण्डर जारी करने के पूर्व एडीबी के दिल्ली और मनीला कार्यालय से अधिकृत मंजूरी लेनी पड़ी। इसमें 150 किमी लम्बी पाईप लाईन के जरिए नर्मदा से 360 एमलडी पानी इंदौर लाया जाना है। इसके ठेके ग्रेफाईट इण्डिया (नाशिक), जेएमसी प्रोजेक्ट (अहमदाबाद), प्रतिभा कंस्ट्रक्शन (मुंबई) और एसईडब्ल्यू (हैदराबाद) को दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त स्वच्छता तथा विद्युतीय और यांत्रिक पुनर्वास संबंधी कुछ छोटे टेण्डर भी जारी हो चुके हैं।

राजनैतिक स्थिति – एडीबी की सारी शर्तें मान लेने के बाद भी अभी तक राजनैतिक दल दर वृद्धि के प्रति सहज नहीं है। जब तक जरूरी न हो वे इससे बचने का ही प्रयास करते नजर आते हैं। भोपाल नगरनिगम में काँग्रेस पार्षद दल के सचेतक एवं पूर्व जलकार्य प्रभारी **श्री सलीम एहमद** के अनुसार कोई राजनैतिक दल दर वृद्धि नहीं चाहता। निगम आयुक्त ने भोपाल में एडीबी की शर्तों के तहत दरवृद्धि का प्रस्ताव 4 बार भेजा लेकिन उसे न तो नगरनिगम पास करना चाहता है और न ही मेयर इन काउंसिल। सब चाहते हैं कि सरकार ही एकतरफा निर्णय लेकर दर वृद्धि कर दें ताकि ठीकरा उनके सिर न फूटे।

म०प्र० जल क्षेत्र पुनर्रचना परियोजना

मध्यप्रदेश को सितंबर 2004 में विश्व बैंक से 39.6 करोड़ डॉलर (1782 करोड़ रूपये)[1] का कर्ज मिला है। इस कर्ज से **''मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना''** संचालित की जा रही है जिसके तहत 1986 के पूर्व निर्मित 654 छोटी और मध्यम सिंचाई परियोजनाओं तथा नहर तंत्रों का सुदृढ़ीकरण एवं आधुनिकीकरण किया जाना है। इससे प्रदेश के 30 जिलों में 4,95,000 हेक्टर में विश्वसनीय सिंचाई सुविधा उपलब्ध होगी। कर्ज दस्तावेज में कहा गया है कि जीर्णशीर्ण सिंचाई तंत्रों के कारण वर्तमान में इसके आधे क्षेत्र में ही सिंचाई उपलब्ध हो पा रही है। हालांकि इस कर्ज का उपयोग पाँच नदी कछारों (चंबल, सिंध, बेतवा, केन और टोंस) में ही किया जाना है। लेकिन इसकी शर्तों के तहत किये जाने वाले नीतिगत बदलावों का प्रभाव पूरे राज्य के किसानों पर पड़ रहा है। अभी तक मिले संकेत बताते हैं कि राज्य पानी के निजीकरण की दिशा में बढ़ने लगा है। कुछ बानगियाँ -

नया सिंचाई कानून - 27 नवंबर 2004 को जिस दिन प्रदेश की मंत्रिपरिषद् ने विश्व बैंक के इस कर्ज का अनुमोदन किया उसी दिन *'मध्यप्रदेश सिंचाई में कृषकों की भागीदारी (संशोधन) विधेयक* 2004*'* को भी स्वीकृति दी।

सिंचाई दरों में वृद्धि - 15 नवंबर 2005 के केबिनेट निर्णय में सिंचाई योजनाओं के रखरखाव खर्च की पूर्ति हेतु सिंचाई दरों में प्रतिवर्ष 20 प्रतिशत वृद्धि का निर्णय ले लिया गया। अब परियोजना के समापन तक ये दरें बढ़ाई जाती रहेंगी। इसका अर्थ है कि जो किसान वर्ष 2005 में सिंचाई पर 100 रूपए प्रतिवर्ष खर्च कर रहा होगा उसे योजना समाप्ति तक 249 रूपए यानी ढाई गुना अधिक और 10 वर्ष बाद 620 रूपए यानी 6 गुना से अधिक राशि खर्च करनी होगी।

भू-व्यपवर्तन कानून में ढील - 4 अक्टूबर 2007 के केबिनेट निर्णय में ''आवास एवं पर्यावास नीति 2007'' के बहाने कृषि भूमि के गैरकृषि कार्यों में उपयोग हेतु अनुमति की प्रथा समाप्त कर दी गई है। हालांकि यह शर्त विश्व बैंक द्वारा वित्तपोषित जेएनएनयूआरम में शामिल थी लेकिन इससे रियल ऐस्टेट कारोबारियों द्वारा बड़े पैमाने पर कृषि जमीन देने से कृषि क्षेत्र पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

जल उपभोक्ता समूह - 4 वर्ष पूर्व प्रदेश में जल उपभोक्ता समूहों के चुनाव जोर-शोर में दलीय समर्थन के आधार पर हुए। इन चुनावों में धन का उपयोग आम चुनावों के बराबर ही देखने में आया। जल उपभोक्ता समूहों के चुनावों के दौरान अखबारों के पूरे पृष्ठ के विज्ञापन देखने को मिले जो सिद्ध करता है कि अब यह क्षेत्र भी दबंगों के हाथों में जा रहा है।

नियामक तंत्र – दिसंबर 2005 तक जल नियामक तंत्र (State Water Tariff Regulatory Commission) से संबंधित कानून का प्रारूप तैयार हो जाना चाहिए था, जो तैयार तो हो चुका था लेकिन अभी तक इसे विधानसभा में प्रस्तुत नहीं किया जा सका है। 10 मई 2007 को भोपाल में ''जल नियामक आयोग के गठन की आवश्यकता'' विषय पर प्रोजेक्ट उदय (एडीबी सहायतित परियोजना) द्वारा एक कार्यशाला आयोजित की गई। प्रोजक्ट उदय के परियोजना संचालक श्री हरि रंजन राव ने कहा कि नियामक आयोग की आवश्यकता जैसे विषय पर कार्यशाला आयोजित करने वाला मध्यप्रदेश देश का पहला राज्य है। इसके बाद अब जल नियामक कानून को अंतिम रूप देने हेतु मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में एक उचाधिकार समिति (High Power Panel) बनाए जाने की खबर है।

●●●

8
म०प्र० के प्रस्तावित जल नियामक आयोग के प्रभावों पर
कार्यशाला एवं आमसभा

उद्घाटन सत्र
(सत्र संचालन - श्री अनिल सद्गोपाल)

मध्यप्रदेश में जल नियामक आयोग के प्रभावों पर विचार करने हेतु 13 जून 2008 को गाँधी भवन, भोपाल में एक कार्यशाला और आमसभा का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला की शुरूआत सभी प्रतिभागियों के परिचय से हुई। इसके उपरांत 'मंथन अध्ययन केन्द्र के **श्रीपाद धर्माधिकारी** ने कार्यक्रम की भूमिका रखते हुए कहा कि जलक्षेत्र में सुधार के नाम पर इस समय कई प्रक्रियाएँ जारी हैं। 'सुधार' कार्यक्रमों का मकसद जलक्षेत्र को बाजार में बदल दिया जाना है। इसके परिणामस्वरूप पानी की दरें बढ़ाई जाएगी, पूरी लागत वसूली की जाएगी और इस क्षेत्र पर सरकारी नियंत्रण कम से कम होकर यह क्षेत्र बाजार के अधीन हो जाएगा। इन सुधार कार्यक्रमों में नियामक तंत्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगें। पानी सामाजिक संसाधन माना जाता रहा है। आज उसकी बुनियाद बदलकर इसे बाजार की वस्तु बनाया जा रहा है। इसलिए इसे राजनैतिक हस्तक्षेप से पृथक किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश में भी बदलाव की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। विश्व बैंक ने 2004 में 'मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना' के नाम से 39.6 करोड़ डॉलर का कर्ज दिया है। इस कर्ज के तहत विश्व बैंक ने 31 मार्च 2005 तक नियामक आयोग संबंधी कानून का मसौदा तैयार करने की शर्त रखी गई थी। नियामक आयोग के गठन व संचालन के बाद जन सामान्य पर पड़ने वाले प्रभावों की पड़ताल हेतु यह कार्यशाला आयोजित की गई है। हमारे सामने करीब 2 वर्ष पूर्व महाराष्ट्र में गठित देश के पहले 'जल संपत्ति नियमन प्राधिकरण' के अनुभव है। जल क्षेत्र सुधार के कार्यक्रम पंजाब, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड, राजस्थान, तमिलनाडु समेत देश के कई राज्यों में जारी है।

'प्रयास' के श्री **सुबोध वागळे** ने नियामक की अवधारणा स्पष्ट करते हुए कहा कि इसका अर्थ है नियंत्रण। विभिन्न क्षेत्रों में निजीकरण के कारण जनहित को सुरक्षित रखने हेतु नियामक की आवश्यकता महसूस हुई थी। यह कोई नई परिकल्पना नहीं है, सिर्फ इसका स्वरूप बदला है।

नर्मदा बचाओ आंदोलन के **श्री भगवान मुकाती** ने कहा कि विदेशी कर्ज इस देश की जनता पर भारी पड़ रहे हैं। एडीबी के 1600 करोड़ रूपए के कर्ज के बदले प्रदेश के बिजली क्षेत्र में बड़े बदलाव किए गए हैं। विद्युत नियामक आयोग ने आम जनता की उपेक्षा की। सरकार में रहकर एडीबी से व्यवहार करने वाले पूर्व नौकरशाह को ही इस नियामक आयोग का अध्यक्ष बना दिया गया। अब पानी पर नियामक आयोग बनाने का अर्थ है कि सरकार इस कुदरती संसाधन पर भी पहरा लगा देगी। कुओं और ट्यूबवेलों के साथ ही नदी-तालाबों से भी सिंचाई हेतु पानी खरीदना पड़ेगा।

परिवर्तन (दिल्ली) के **श्री अरविंद केजरीवाल** ने कहा कि सार्वजनिक क्षेत्र को सुनियोजित तरीके से खत्म करने की कोशिशें चल रही है। इस प्रक्रिया को बढ़ावा देने में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों का बड़ा हाथ है। सुनियोजित तरीके से हमारे नौकरशाहों को विश्व बैंक और अन्य वित्तीय एजेंसियों में Rewolving Door (घुमने वाला दरवाजा जिसके इधर-उधर आसानी हुआ जा सकता है) के माध्यम से भेजा जाता है। वहाँ से लौटकर ये नौकरशाह हमारी सरकार में उन वित्तीय एजेंसियों के एजेंटों की तरह काम करते हैं। उन्होंने कहा कि देश को आर्थिक दिवालियेपन अथवा विदेशी मुद्रा भण्डार संकट के समय इन अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के कर्ज की जरूरत होती है। लेकिन अभी तो देश में ऐसी स्थिति नहीं है, फिर क्यों अंधाधुंध तरीके से कर्ज लेकर हमारी संप्रभुता गिरवी रखी जा रही है?

उन्होंने दिल्ली में पानी के निजीकरण के खिलाफ की लड़ाई के अनुभवों के आधार पर बताया कि निजीकरण के पक्ष में आधारहीन आँकड़े प्रस्तुत किए जाते हैं। दिल्ली सरकार के अनुसार दिल्ली में प्रति दिन 750 MGD (मिलियन गैलन/दिन) पानी की आपूर्ति की जाती है। अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से 230 लीटर रोजाना। इस प्रकार दिल्ली दुनिया में सबसे अधिक जल उपलब्धता वाला शहर है। लेकिन सरकार का यह भी कहना है कि जीर्ण-शीर्ण लाईनों के कारण आधा पानी जमीन में रिस कर बर्बाद हो जाता है। लेकिन मजेदार बात यह है कि दिल्ली में 6 स्थानों से पानी प्रवेश करता है और इनमें से किसी स्थान पर कोई मीटर नहीं लगा है जिससे दिल्ली में प्रवेश करने वाले पानी की मात्रा का पता लगाया जा सके। अत: स्पष्ट है कि दिल्ली जल बोर्ड के निजीकरण हेतु ही ये थोथी दलीलें दी जा रही थी। उन्होंने पानी के विकेन्द्रित नियोजन पर बल दिया।

निजीकरण के बाद दरों के बढ़ने का कारण सलाहकारों के अत्यधिक ऊँचे वेतन है। निजीकरण हेतु दिल्ली को 21 क्षत्रों में विभाजित किया गया था। विश्व बैंक की शर्त के अनुसार प्रत्येक क्षेत्र के लिए 4 विदेशी सलाहकार नियुक्त किए जाने थे जिनमें से प्रत्येक का वेतन 25 हजार डॉलर प्रतिमाह रखा गया था। यानी 163 करोड़ रूपए के सालाना बजट वाले दिल्ली जल बोर्ड को सलाहकारों पर ही 100 करोड़ रूपए खर्च करने को कहा गया था।

सत्र संचालक की टिप्पणी

हमारी सरकार बहुत छोटे से कर्जों से सार्वजनिक ढाँचों में बड़े परिवर्तन की रही है जो विशुद्ध रूप से निजी कंपनियों के हित में है। सन् 2001 में देश की सभी राज्य सरकारें प्रारंभिक शिक्षा पर सालाना 40

हजार करोड़ रूपए खर्च कर रही थी। लेकिन बैंक के मात्र 1100 करोड़ रूपए के अनुदान के लिए औचित्यहीन जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) शुरू कर दिया गया। इस कार्यक्रम के बहाने विश्व बैंक की शर्तों ने देश की शिक्षा व्यवस्था को ध्वंस्त कर दिया। जो सरकारें सालाना 40 हजार करोड़ रूपए खर्च कर रही थी क्या वे और 1 हजार करोड़ रूपए नहीं जुटा सकती थी?

राजनीति, सामाजिक कर्म और विकास की अवधारणाओं को खत्म करने हेतु हिंदुस्तान पर हमला कर रही ताकतें नवउदारवादी अवधारणाएँ थोप रही है। इन अवधारणाओं का मुकाबला करने हेतु हमारी सोच स्पष्ट होना चाहिए। जब सरकार जनभावनाओं का अनादर कर तानाशाही के रास्ते चलने लगे तो ऐसे समय कॉम० शंकर गुहा नियोगी की 'संघर्ष और निर्माण' की अवधारणा हमें राह दिखाती है। सही विकास के लिए संघर्ष और निर्माण में संतुलन की आवश्यकता है। राजनैतिक विश्लेषण राजनैतिक कर्म की बुनियाद होती है।

दूसरा सत्र - नियामक सत्र

(सत्र संचालन - सुश्री नीला हार्डीकर एवं श्री नीलेश देसाई)

'प्रयास' की **सुश्री कल्पना दीक्षित** ने महाराष्ट्र के जलक्षेत्र में 1990 से जारी बदलावों की चर्चा करते हुए कहा कि पानी के उपयोग की प्राथमिकता तय करते समय पेयजल के बाद उद्योग को प्राथमिकता दी है। सिंचाई को तीसरा स्थान दिया गया है। 'सुधार' के तहत जो संस्थागत बदलाव हो रहे हैं वे भी निजीकरण की प्रक्रिया को ही मजबूत करने वाले हैं। उन्होंने 'महाराष्ट्र जल संपत्ति नियमन प्राधिकरण' के कटु अनुभवों का विस्तार से उल्लेख करते हुए यह भी बताया कि इन अनुभवों से सीख जी जानी चाहिए ताकि यही प्रक्रिया मध्यप्रदेश तथा अन्य राज्यों में न दोहराई जा सके।

'प्रयास' के ही **श्री सचिन वारघड़े** ने 'महाराष्ट्र जल संपत्ति नियमन प्राधिकरण' के अधिकारों और गतिविधियों पर प्रस्तुतिकरण देते हुए खुलासा किया कि -

i. जल नियामक कानून के जल अधिकारों और जल दर निर्धारण के प्रावधानों से पानी पर निजी कंपनियों, उद्योग समूहों और बाजार की ताकतों का कब्जा हो जाएगा

ii. जिन स्थानों पर लोगों के जल संसाधन पर अधिकार स्थापित नहीं हो पाएँगें वहाँ पर बाजार की ताकतों का कब्जा ज्यादा होगा और समुदाय वंचित रहेंगें।

iii. नियामक तंत्र का उपयोग जल संसाधनों पर कब्जे को कानूनी जामा पहनाने में किया जाएगा।
(सुश्री कल्पना दीक्षित और सचिन वारघड़े के विस्तृत प्रस्तुतिकरण इसी खण्ड में प्रकाशित किए गए हैं)

नियामक तंत्र के प्रभावों पर चर्चा करते हुए मंथन के **श्री रेहमत** ने कहा कि इससे राज्य की जनता के प्रति जवाबदेही समाप्त हो जाएगी। पानी का निजीकरण किया जाएगा। विश्व बैंक दस्तावेज में 1 मझौली और 25 छोटी परियोजनाओं के निजीकरण की शर्त रखी गई है। शर्त के अनुसार प्रदेश सरकार ने नियामक कानून का प्रारूप मार्च 2006 में तैयार कर लिया है।

सत्र संचालकों की टिप्पणियाँ

सुश्री नीला हार्डीकर – दुनिया में ऐसी तकनीकें खोजी जा चुकी है कि गाँवों के संसाधनों को लूटना आसान हो गया है। संविधान संशोधन के बावजूद स्थानीय प्रशासन की शक्तियों और अधिकारों के संबंध में लचर कानून इस लूट में समर्थन करते नज़र आते हैं। इसलिए अब विधायकों के स्तर पर इस मुद्दे को उठाने का प्रयास करना चाहिए।

श्री नीलेश देसाई – प्रयास' के प्रस्तुतिकरणों से सिद्ध हो चुका है कि महाराष्ट्र में समानता और सहभागिता के नाम पर लोगों को छला गया तथा छला जा रहा है। चूँकि मध्यप्रदेश में भी अब इस इतिहास के दोहराये जाने की आशंका है इसलिए हमें सतर्क रहना है। साथ ही हमें विकल्प की रणनीति पर भी चर्चा करनी चाहिए।

तीसरा सत्र-म०प्र० में सेक्टर रिफार्म परियोजनाएँ

(सत्र संचालन - श्री के० जी० व्यास)

समाजवादी जन परिषद एवं किसान आदिवासी संगठन के **श्री सुनील भाई** ने कहा कि पारदर्शिता, जवाबदेही, स्वायत्तता और जनभागीदारी जैसे शब्दों से भ्रम फैलाया जा रहा है। पूर्व मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह के काल में जनभागीदारी समिति, रोगी कल्याण समिति, जल उपभोक्ता समिति जैसी समितियाँ गठित की गई थी। इन समितियों द्वारा व्यवस्था नहीं संभाल पाने पर निजीकरण का बहाना आसान हुआ। उन्होंने समाजवादी विचारक स्व० किशन मेहता के कथन का उल्लेख करते हुए कहा कि शुद्धिकृत जल प्रदाय ने भी वितरण में असमानता बढ़ाई।

उन्होंने कहा कि एडीबी सहायतित शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण सुधार परियोजना का मुख्य लक्ष्य है कि सभी से पानी के पैसे वसूल किए जाए। शतप्रतिशत मीटरीकरण से बूँद-बूँद पानी के दाम वसूले जाएँगें। जिनके पास पैसे नहीं है उन्हें पानी नहीं दिया जाएगा। बिजली और शिक्षा से गरीबों को वंचित कर चुकी यह बर्बर व्यवस्था अब उन्हें पानी से भी वंचित करने जा रही है। मानव सभ्यता के इतिहास में ऐसा दुःखद दिन इसके पूर्व कभी नहीं आया। 2-3 पैसे के पानी को 50 पैसे का पैकिंग कर 12 रूपए में बेचा जा रहा है। यह लूट का नया आयाम है। पारंपरिक लूट के तरीकों से साम्राज्यवादी ताकतें संतुष्ट नहीं है इसलिए उनके एजेंट अब लूट के नए तरीके इजाद करने में लगे हैं। लूटने के लिए एडीबी, विश्व बैंक, डीएफआईडी आदि सब एक हो गए हैं। पंचायतों को पूर्ण अधिकार नहीं है इसलिए जिले के स्तर पर विधानसभा जैसे ढाँचे का निर्माण करना होगा, जो जिला स्तर पर ऐसे मामले हल करें।

उन्होंने कहा कि प्राकृतिक संसाधनों की लूट के खिलाफ साझा संघर्ष की जरूरत है। हमने जंगलों और आदिवासियों को अलग करने वाली विश्व बैंक सहायतित देश की सबसे बड़ी वानिकी परियोजना का विरोध किया तो उसका दूसरा चरण रोक देना पड़ा।

सत्र संचालक की टिप्पणी

पानी पर बाजार का नियंत्रण नहीं होना चाहिए। जलप्रदाय जैसी मूलभूत सेवा को लागत वापसी के सिद्धांत से भी नहीं जोड़ा जाना चाहिए। इससे बढ़ने वाली अमीरी-गरीबी की खाई समाज को वर्ग संघर्ष की ओर धकेलेगी इसलिए, ऐसे प्रयासों पर लगाम लगनी चाहिए।

चौथा सत्र-म०प्र० में सिंचाई पर सेक्टर रिफार्म के प्रभावँ

(सत्र संचालन - श्री विजय भाई)

'ग्राम सेवा समिति', रोहना (होशंगाबाद) के **श्री लक्ष्मणसिंह राजपूत** ने बताया कि तवा परियोजना (होशंगाबाद) के कमाण्ड क्षेत्र में 156 जल उपभोक्ता समितियाँ गठित की गई है। अभी तक के अनुभवों से स्पष्ट है कि इन समितियों को असफल करने के प्रयास किए जा रहे हैं। पहले नहरों के रखरखाव हेतु 350 रूपए/हेक्टर के हिसाब से राशि आवंटित की जाती थी लेकिन जब से जल उपभोक्ता समितियाँ बनी है यह राशि घटाकर मात्र 50 रूपए/हेक्टर कर दी गई है।

इन समितियों से सामाजिक दृष्टि से संपन्न एवं राजनैतिक दलों से जुड़े लोग शामिल हैं, इसलिए गतिविधियाँ पारदर्शी नहीं है। इन समितियों में प्रशासनिक हस्तक्षेप अधिक है। लेकिन सिंचाई व्यवस्था में कुछ सुधार भी दिखाई दे रहा है। नहर के अंतिम छोर पर पानी पहुँचने लगा है। राजस्व वसूली बढ़ी है। अधिकारियों की बनिस्बत समिति सदस्यों तक किसानों की पहुँच आसान है।

उन्होंने रखरखाव खर्च को अपर्याप्त बताया तथा यह समय पर समितियों को मिलता भी नहीं। समितियों में आम किसानों/महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने तथा समिति सदस्यों के प्रशिक्षण की जरूरत भी बताई।

जल उपभोक्ता समिति के अध्यक्ष **श्री चण्डिकेश्वरसिंह तिवारी** ने बताया कि जल उपभोक्ता समितियों का गठन पानी का प्रबंधन किसानों के हाथों में देने के उद्देश्य से किया गया है। किसानों को चाहिए कि वे कम पानी वाली फसलों का चयन करें। जल बजट बनाकर फसलें लगाएँ। पहले हमारे क्षेत्र में 2 - 3 सिंचाई का पानी ही मिल पाता था। अब उनके अध्यक्ष बनने के बाद सुधार हुआ है। नहर रखरखाव का बजट कम दिया जाता है। विश्व बैंक समर्थित परियोजना से जहाँ किसानों के हित प्रभावित होंगें अथवा निजीकरण का प्रयास होगा तो हम विरोध करेंगें। किसानों को बचाने के लिए साझा संघर्ष जरूरी है।

सत्र संचालक की टिप्पणी

जल उपभोक्ता समितियाँ जन भागीदारी का नाटक है। इन समितियों के पास अधिकार तो ज्यादा होते नहीं। ये सिंचाई की दरें नहीं तय कर सकती। सिर्फ सरकार द्वारा बनाए कानूनों को लागू करवाना ही इनका काम है। वन समिति में भी स्वायत्तता नहीं है। फर्क सिर्फ इतना है कि सरकारी काम को एक तथाकथित समिति द्वारा किया जाता है। पंचायती राज में भी यही हुआ है। पहले ठेकेदारों को काम दिया जाता था अब सरपंचों को।

सहभागियों को धन्यवाद के बाद कार्यशाला का समापन हुआ।

आमसभा सत्र

(सत्र संचालन - श्री चिन्मय मिश्रा)

आमसभा के कार्यक्रम की भूमिका रखते हुए 'मंथन' के निदेशक **श्रीपाद धर्माधिकारी** ने विश्व बैंक के दबाव में पानी को राजनैतिक हस्तक्षेप से बाहर करने के प्रयास की निंदा की। उन्होंने कहा कि इससे सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर लोगों के हितों पर कुठाराघात होगा। जो पैसा नहीं दे सकता उसे पानी देने से इंकार कर दिया जाएगा। उन्होंने कहा कि नियामक व्यवस्था लागू होने के पहले इस पर प्रदेश में व्यापक बहस होना चाहिए।

'प्रयास' संस्था (पुणे) के निदेशक **श्री सुबोध वागले** ने कहा कि महाराष्ट्र सरकार ने जल नियमन प्राधिकरण के गठन के पूर्व अपेक्षित पारदर्शिता नहीं रखी। मात्र 6 स्थानों पर औपचारिक रूप से कार्यशालाएँ आयोजित की लेकिन न तो कार्यशालाओं में प्राप्त सुझावों को माना गया और न ही इन सुझावों को नकारने का कोई कारण बताया गया। यहाँ तक कि इन कार्यशालाओं के कार्यवृत्त भी अभी तक सार्वजनिक नहीं किए हैं। उन्होंने कहा कि इसे विधानसभा में भी एक सुनियोजित नीति के तहत बिना चर्चा के पारित करवाया गया।

मैगसेसे पुरस्कार से सम्मानित **श्री अरविंद केजरीवाल** ने कहा कि नियामक आयोग के गठन का अर्थ है कि सरकार ने पानी के निजीकरण का मन बना लिया है। जीवन के लिए जरुरी संसाधनों के निजीकरण का विरोध किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों ने पहले ही तय कर लिया है कि किस वर्ष में पानी की दरें क्या हो। लोकतांत्रिक व्यवस्था में यह दु:खद स्थिति है जो विधानमण्डलों को औचित्यहीन बना देती है।

भोपाल गैस पीड़ित महिला उद्योग संगठन के **श्री अब्दुल जब्बार** कहा कि 1890 में भोपाल की रानी कुदसिया बेगम ने एक फरमान जारी कर पानी को खुदा की नियामत बताते हुए इसे किसी भी टेक्स से परे माना था लेकिन अब सार्वजनिक नलों को बंद कर लोगों को पानी से वंचित करने का फरमान जारी किया जा रहा है। बोतल और पाउच संस्कृति से यह जताया जा रहा है कि पानी बाजार की वस्तु है।

मध्यप्रदेश योजना मण्डल के उपाध्यक्ष **श्री सोमपालसिंह शास्त्री** ने कहा कि नियामक तंत्रों की वस्तुपरकता और विश्वसनीयता संदिग्ध रही है। सरकारी नीतियों का समर्थक करने वाले Nexus (गिरोह) से ही लोगों को इसमें लिया जाता है। उन्होंने कहा कि किसी न किसी रूप में नियामक तो जरूरी है लेकिन वे नियामक के वर्तमान स्वरूप का विरोध करते हैं।

उन्होंने अधीनस्थ विधानों अथवा नियमों (Conduct of Business) के बारे में कहा कि ये वास्तव में विधानों को लागू करने में आसानी हेतु बनाए है लेकिन पिछले अनुभवों से पता चलता है कि इन अधीनस्थ विधानों को इस प्रकार तैयार किया जाता है कि उससे विधान लागू करना कठिन हो जाता है।

उन्होंने बजट प्राथमिकता बदलने की वकालत करते हुए कहा कि केन्द्र के 411 करोड़ के पानी के बजट में से 35 प्रतिशत राशि बाढ़ राहत के लिए है। उन्होंने भोपाल की 270 करोड़ की नर्मदा पेयजल योजना से असहमति दर्शाते हुए कहा कि 60 - 70 करोड़ रूपए में पूरे भोपाल जिले का जलग्रहण क्षेत्र विकास हो सकता है। उन्होंने कहा कि दिल्ली मे पानी का निजीकरण नौकरशाहों के निहित स्वार्थों से रूका। उनके मतानुसार साम्राज्यवादी ताकतें और सरकार तब ताकतवर होती हैं जब जनता कमजोर होती है।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्स०) के प्रतिनिधि **कॉम० पूषण भट्टाचार्य** और गोण्डवाना मुक्ति सेना के प्रतिनिधि **पं० रामलाल त्यागी** ने नियामक व्यवस्था और पानी के निजीकरण के प्रयास का विरोध किया।

दैनिक भास्कर के राज्य प्रमुख **श्री अभिलाष खाण्डेकर** ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में पानी जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे पर जनमत के अभाव को रेखांकित किया। उन्होंने कहा कि नियामक तंत्र के गठन में पारदर्शिता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

कार्यशाला के सहभागियों की टिप्पणियाँ

नियामक की नियम-शर्तों में सामाजिक चिंताएँ शामिल की जानी चाहिए। इसका प्रारूप अखबारों में प्रकाशित कर जनता के विचार लिए जाने चाहिए। इसमें प्रशासनिक अधिकारियों के स्थान पर उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को शामिल किया जाना चाहिए। नियामक तंत्र में प्रक्रियागत और विषयवस्तु की खामियों को दूर कर इसे मानवीय बनाया जाना चाहिए।

- के० जी० व्यास, भोपाल

ग्रामसभा हो या सिंचाई पंचायत या फिर निजी-सार्वजनिक भागीदारी यह सारा विकेन्द्रीकरण एक साजिश के तहत हो रहा है। इन ढाँचों को इस स्थिति में पहुँचा दिया जाएगा कि निजीकरण आसान हों।

- योगेश दीवान, होशंगाबाद

पानी हमारी मूलभूत जरूरत एवं है। इससे वंचित करना जीवन के अधिकार से वंचित करना है। हमें अपने अधिकारों से वंचित करने के प्रयास के खिलाफ आत्मरक्षा की रणनीति अपनानी चाहिए। सरकार तो प्रबंधनकर्ता मात्र हैं हम उसके मालिक हैं। हम अपनी ताकत दिखाएँ।

- शिवदयाल बौंठियाल, कोटद्वार (उत्तराखण्ड)

सिंचाई तत्र के इस तथाकथित विकेन्द्रीकरण में जल उपभोक्ता संस्थाओं की भूमिका सीमित है। यह विकेन्द्रीकरण का दिखावा मात्र है।

- अनंत जौहरी, जमुड़ी (अनूपपुर)

नियामक आयोग एक दुकान है। इसमें वही लोग शामिल होंगें जो संसाधनों को बेचने और लूटने के पक्षधर हैं। इसका कड़ा विरोध किया जाना चाहिए। हमारे विरोध की ताकत से ही तय होगा कि सरकार अपने मंसूबों में कामयाब हो पाती है अथवा नहीं।

- भगवान मुकाती, नर्मदा बचाओ आंदोलन

जल संसाधनों में प्राथमिकता लोगों की आजीविका के बजाय उद्योगों को दी जा रही है। छत्तीसगढ़ की शिवनाथ नदी की 23 किमी धारा को उद्योगपति के हाथों बेच दिया गया था। कंपनी ने

नदी के 5 किमी मीटर के दायरे में हेण्डपम्प भी नहीं लगने दिये क्योंकि कंपनी के अनुसार भू-जलस्तर में व द्धि उसके एनीकट की वजह से हुई। आज छत्तीसगढ़ की नदियों का सारा पानी भिलाई इस्पात संयंत्र को दिया जा रहा है। यह उपनिवेशवादी नीति इस कारण चल पा रही है कि इसमें हमारी सरकार भी शामिल है। सरकार के नवउदारवादी रूख के खिलाफ हमारी रणनीति पर विमर्श जरूरी है।

- सारिका सिन्हा, भोपाल

छत्तीसगढ़ के अलावा मध्यप्रदेश के छिंदवाड़ा और सिवनी तथा महाराष्ट्र के चंद्रपुर में तालाबों की परम्परा रही है। वहाँ तालाबों के प्रबंधन तथा नियंत्रण के लिए अनूठी नियामक व्यवस्था रही है जिसमें मुख्यरूप से भूमिहीनों को शामिल किया जाता था, क्योंकि भूमिहीनों के पानी पर हित भिन्न प्रकार के होते हैं।

इससे संसाधनों पर नियंत्रण कायम रहता था। इसके विपरीत सरकार द्वारा निर्मित संसाधनों में कोई नियंत्रण नहीं होता है।

- राकेश दीवान, भोपाल

महाराष्ट्र में हर क्षेत्र में power structures बन गए है। गाँव की सहकारी समिति से शकर कारखाने तक और कॉलेज तक ये power structures है। सरकारी आदेश से जल उपभोक्ता समितियाँ बनाई जा रही है। इसका उपयोग दलीय राजनीति में होने से इसकी मूल भावना (Spirit) खत्म हो जाएगी। जिस प्रकार पहले शकर कारखाना तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर गाँव से लेकर ऊपर तक कब्जा हुआ उसी तरह अब पानी पर कब्जा करने में इस ढाँचे का उपयोग किया जाएगा। 'पानी पंचायत' जैसे आदर्श उपभोक्ता संघ काफी कम है और इनकी सफलता का राज यह है कि यह ढाँचा स्थानीय जरूरत के आधार पर बना है। जब उपरी आदेश पर ऐसी संस्थाएँ बनेगी तो इस ढाँचे को नजरअंदाज किया जाएगा। और कुछ वर्षों में ये ढाँचे खत्म भी हो जाएँगें और किसानों को पानी भी नहीं मिलेगा।

- सुबोध वागळे, पुणे

कई शहरों ने अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों से कर्ज लिया है। ऐसे में इनका प्रयास होगा कि जल्द से जल्द नियामक आयोग बनें।

- तपन भट्टाचार्य, इंदौर

मुझे लगता है कि यदि एडीबी/विश्व बैंक के कर्ज नहीं होते तब भी पूँजीवादी विश्व व्यवस्था में स्थिति इससे अलग नहीं होती।

- प्रदीप सिंह, भोपाल

●●●

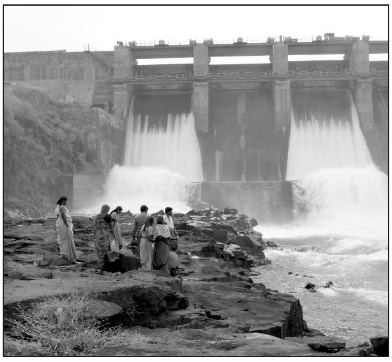

भाग - 4

महाराष्ट्र में पानी का बाजार

महाराष्ट्र के अनुभव से सामने आया कि जन आक्रोश से डर कर सरकार ने पानी के निजीकरण की गति अपेक्षाकृत धीमी रखी है। हालांकि यह सरकार की रणनीति का हिस्सा है लेकिन हमें सावधान तो रहना ही होगा। हाल ही में महाराष्ट्र जल नियमन प्राधिकरण ने सिंचाई दर निर्धारण की प्रक्रिया शुरू की है। जिस आधार पर दर निर्धारण का प्रस्ताव रखा गया है उससे यह तय है की पहले से दयनीय दौर से गुजर रही कृषि अर्थ व्यवस्था और समाज का बड़े हिस्से किसानों पर इसका वितरीत प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा।

भाग 4

महाराष्ट्र में पानी का बाजार

9. महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के गठन की प्रक्रिया एवं स्वरूप

10. महाराष्ट्र जल नियामक आयोग के अनुभव और सीख

9

महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के गठन की प्रक्रिया एवं स्वरूप

महाराष्ट्र में 1990 से पेयजल के क्षेत्र में 'क्षेत्र सुधार' प्रारंभ किया गया था। सन् 2000 के बाद महाराष्ट्र सरकार ने विश्व बैंक से 'महाराष्ट्र जल क्षेत्र सुधार परियोजना' के लिए सहायता माँग कर इस प्रक्रिया को गति दी। इस परियोजना के तहत जलक्षेत्र की संपूर्ण पुनर्रचना सुझाने वाले अनेक नीतिगत और संस्थागत बदलाव प्रस्तावित थे। नीतिगत बदलाव का प्रतिबिंब 2003 में तैयार की गई 'राज्य जलनीति में दिखाई देता है। इस जलनीति में विभन्न स्तरों पर निजी क्षेत्र की सहभागिता बढ़ाने की आवश्यकता पर बल दिया गया। साथ ही, राज्य की भूमिका में परिवर्तन लाने, जल क्षेत्र की कार्यक्षमता तथा उत्पादकता बढ़ाने के लिए नई तकनीकों का उपयोग करने, जलक्षेत्र की व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण जैसे मूलभूत बदलावों का उल्लेख इस नीति में है। इस नीति ने पानी के उपयोग की प्राथमिकता तय करते समय पीने के पानी के बाद उद्योग को प्राथमिकता दी है। सिंचाई को तीसरा क्रम दिया गया है। पानी को एक आर्थिक वस्तु मानते हुए जिस भी तरीके से पानी के ज्यादा दाम मिले उसे 'उत्पादक' उपयोग माना गया है।

नीतिगत बदलाव के साथ ही महाराष्ट्र में जलक्षेत्र संबंधी नए कानून पारित किए गए। सन् 2005 में सिंचाई प्रबंधन में किसानों का सहभाग बढ़ाने के लिए कानून बनाया गया। इसके तहत 'जल उपभोक्ता संस्थाएँ' बनाना आवश्यक हो गया। इसी वर्ष 'महाराष्ट्र जल नियमन प्राधिकरण' का गठन करने वाला कानून पारित किया गया। सन् 2007 में भूजल के उपयोग पर नियंत्रण हेतु राज्य सरकार ने विधेयक का मसौदा तैयार किया।

इस कानूनी बदलाव की प्रक्रिया के तहत जलक्षेत्र में अनेक नई संस्थाओं का गठन किया जा रहा है। राज्य स्तर पर नियामक प्राधिकरण के अलावा जनप्रतिनिधियों की 'राज्य जल परिषद' व प्रशासनिक अधिकारियों का 'राज्य जल मण्डल' बनाया गया। महाराष्ट्र में पाँच नदी घाटी निगमों की भी पुनर्रचना सुझाई गई है। स्थानीय स्तर पर 'जल उपभोक्ता संस्था' और जलग्रहण क्षेत्र के स्तर पर 'ग्रामीण जल आपूर्ति समिति' बनाया जाना प्रस्तावित है। जलक्षेत्र के नियोजन की प्रक्रिया में भी बदलाव आ रहे हैं। महाराष्ट्र में प्रत्येक नदी घाटी की पृथक जल योजना बनाकर उनके आधार पर राज्य स्तरीय समन्वित राज्य जल योजना बनाना प्रस्तावित है। जल संसाधन नियोजन हेतु इस प्रकार की योजना महत्वपूर्ण है। लेकिन, विशेषज्ञों के

अनुसार महाराष्ट्र की हर प्रमुख नदी पर इतने बाँध बनाए गए हैं कि अब नए सिरे से घाटी आधारित योजना बनाना मात्र दिखावा करना है।

संक्षेप में इस बदलाव की प्रक्रिया का मुख्य सूत्र है - जल क्षेत्र में राज्य की भूमिका में आमूलचूल बदलाव लाना। जलक्षेत्र के महत्वपूर्ण निर्णय और नियमन के लिए स्वायत्त नियामक प्राधिकरण, जल प्रदाय के लिए निजी क्षेत्र की भागीदारी और जलक्षेत्र प्रबंधन में लोगों की बढ़ती हिस्सेदारी से स्पष्ट है कि राज्य की भूमिका को मात्र सहायक (Facilitator) तक सीमित कर दिया गया है।

महाराष्ट्र में जलक्षेत्र सुधार की प्रक्रिया

सन् 2000 में सरकार ने राज्य की जलनीति और जल उपभोक्ता संस्थाओं संबंधित कानूनी प्रारूपों पर सुझाव माँगें। इसके लिए राज्य में 6 स्थानों पर क्षेत्रीय कार्यशालाओं का आयोजन कर स्वयंसेवी संगठनों, विशेषज्ञों और आम नागरिकों से सुझाव माँगने की प्रक्रिया चलाई गई। नियामक प्राधिकरण का विधेयक सन् 2004 में पहली बार विधानसभा में प्रस्तुत किया गया। उस समय हुई इसकी कड़ी आलोचना के कारण इसे समीक्षा हेतु राज्य विधानसभा के दोनों सदनों की संयुक्त समिति को सौंप दिया गया था। समिति ने इस प्रारूप को अंतिम रूप देने से पहले फिर एक बार लोगों से सुझाव माँगें।

इस तरह सरकार के अनुसार कानून निर्माण की यह प्रक्रिया जनभागीदारी से क्रियांन्वित की गई। मध्यप्रदेश में जल नियामक आयोग का मसौदा विधेयक माँग करने पर भी सरकार ने अभी तक लोगों को उपलब्ध नहीं कराया है। इस प्रकार, पारदर्शिता की दृष्टि से महाराष्ट्र सरकार द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया महत्वपूर्ण लगती है। लेकिन, इस प्रक्रिया में भी निम्न खामियाँ थी जिनकी वजह से ये प्रक्रिया सफल नहीं हो पाई -

- विशेषज्ञों और आम नागरिकों से प्राप्त अनेक महत्वपूर्ण सुझावों का समावेश सरकार ने अंतिम मसौदे में नहीं किया। इनमें से कई सुझाव पानी के उपयोग में समानता लाने के लिए महत्वपूर्ण थे।
- कार्यशाला के बाद विभिन्न सुझावों पर सरकार द्वारा क्या कार्रवाई की गई इसकी सूचना तक सहभागियों को नहीं दी गई। यहाँ तक कि सहभागियों को मीटिंग के कार्यवृत्त भी नहीं दिए गए। जब हमने इन क्षेत्रीय कार्यशालाओं का विवरण पाने की कोशिश की तो शासकीय संस्थाओं ने हमारी माँग टाल दी। बैठक में जो व्यक्ति सहभागी थे उनके द्वारा माँग करने पर भी विवरण उपलब्ध नहीं हो सका। अंत में ये विवरण पाने के लिए हमें 'सूचना के अधिकार' का प्रयोग करना पड़ा। फिर भी शासकीय विभाग से प्राप्त विवरण संतोषजनक नहीं था।
- सरकार ने कोई खास सुझाव स्वीकारने अथवा नकारने की कोई वजह नहीं बताई। इस तरह जनसहभागिता की प्रक्रिया केवल एकतरफा हुई। सहभागी समूहों को मसौदा विधेयक दिखाने की औपचारिकता भर हुई।

जन भागीदारी की इस प्रक्रिया में गंभीर खामियाँ होने की वजह से समाज के जागरूक और सक्रिय समूहों में भी जलक्षेत्र की पुनर्रचना के बारे में अनभिज्ञता है। नियामक प्राधिकरण कानून पारित होने के 2 वर्ष बाद हमने कई राजनैतिक दलों के नेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं और पत्रकारों से इस कानून के बारे में पूछा तो अधिकतर लोगों को इस कानून की जानकारी नहीं थी। जिन पर इस बदलावों का गहरा असर होने वाला है उन आम नागरिकों को आज भी इस गतिविधि की कोई जानकारी नहीं है। जलक्षेत्र में इतने बड़े बदलाव होने के बावजूद इलेक्ट्रानिक मीडिया या समाचार पत्रों में इसकी कोई सुर्खियाँ नहीं है। इससे तथाकथित जनसहभागी प्रक्रिया का पर्दाफाश हुआ है। अपर्याप्त जानकारी, सार्वजनिक बहस से कन्नी काटना और समाज के सभी समूहों तक पहुँचने में सरकार की असफलता से सिद्ध हो गया है कि यह सब भी विश्व बैंक की 'जनभागीदारी' की शर्त पूरी करने की कवायद मात्र थी। वास्तव में यह दावा ही खोखला है कि ऐसी प्रक्रिया से लोगों की प्राथमिकताएँ सरकार तक पहुँचेगी और जलक्षेत्र में सुधार आएगा। नियामक प्राधिकरण कानून जिस तरह से पारित किया गया वह जनतांत्रित सिद्धांतों के खिलाफ है। सुधारित विधेयक 2005 में विधानसभा सत्र के अंतिम दिन शाम 6 बजे प्रस्तुत कर बगैर बहस के पारित करवा लिया गया। उस दिन विधानसभा में कुल 16 विधेयक पारित करवाए गए। पर्याप्त समय नहीं होने के कारण इतने विधेयक पढ़ने का भी समय नहीं था तो फिर चर्चा तो दूर की बात है। विधानपरिषद् में भी इसी प्रकार यह विधेयक पारित करवाया गया।

महाराष्ट्र की इस प्रक्रिया से सीख

- चूँकि 'जनसहभागी प्रक्रिया' के कोई मानक हमारे यहाँ स्थापित नहीं हुए हैं। चंद विशेषज्ञ और स्वयंसेवी संगठनों के साथ चलाई गई परामर्श की प्रक्रिया को कई बार जनसहभागिता कहा जाता हैं। कई बार इस प्रक्रिया में शामिल विशेषज्ञ और संगठनों का सामाजिक आधार और संख्या सीमिति होती है।
- 'जनसहभागिता की कोई प्रक्रिया निर्धारित नहीं होने के कारण सरकार को इसके लिए दोषी ठहराना मुश्किल हो जाता है। लेकिन देखने में आया है कि ज्यादा से ज्यादा लोगों का सहभाग सुनिश्चित करना, प्राप्त सुझावों और आपत्तियों पर कार्रवाई करना और लिए गए निर्णयों के प्रति जवाबदेही जैसी जनसहभागी प्रक्रिया की सरकार द्वारा अनदेखी की जाती है।
- सरकार द्वारा 'जनसहभागी प्रक्रिया' को गंभीरता से नहीं लिए जाने के कारण आम आदमी, कार्यकर्ता और सामाजिक संगठनों में इस प्रक्रिया के प्रति उदासीनता होती है। सरकारी जनहभागिता की प्रक्रिया को दिखावा मात्र मानते हुए सामाजिक समूह तथा आम आदमी इसे शासकीय निर्णयों की बेहतरी के सुझाव के रूप में न देखकर समय की बर्बादी मानते हैं। इस प्रक्रिया को गंभीरता से नहीं लेने के कारण कई बार सामाजिक समूह अपने विश्लेषणों को ठोस सुझाव में परिवर्तित करने में रूचि नहीं लेते।

ऐसे में मध्यप्रदेश के समूहों द्वारा नियामक आयोग के मसौदे पर जनसहभागी प्रक्रिया चलाने की माँग महत्वपूर्ण है। लेकिन, महाराष्ट्र के अनुभव से लगता है कि इस माँग के संदर्भ में 'जनसहभागी प्रक्रिया' के तौर-तरीकों पर विचार किया जाना चाहिए।

महाराष्ट्र नियामक आयोग का स्वरूप

नियामक प्राधिकरण के तीन सदस्य है। प्राधिकरण का अध्यक्ष सेवानिवृत मुख्य सचिव या उसके स्तर का व्यक्ति होगा। अन्य दो सदस्यों में से एक जल अभियांत्रिकी और दूसरा जल आर्थिक विशेषज्ञ होंगा। तीनों सदस्यों का कार्यकाल 3 साल का होगा और सभी निर्णय बहुमत से लिए जाएँगें। इसके अतिरिक्त प्राधिकरण राज्य की 5 नदी घाटियों से 5 विशेषज्ञों को सलाकार के रूप में नियुक्त कर सकता है। इन सलाहकारों को मतदान का अधिकार नहीं है।

नियामक प्राधिकरण में नियुक्ति हेतु वरिष्ठ नौकरशाहों की चयन समिति है। इस समिति के सुझाव पर राज्यपाल प्राधिकरण के सदस्यों की नियुक्ति करते हैं।

'प्रयास' ने जल नियामक आयोग और विद्युत नियामक आयोग दोनों का अध्ययन किया है। विद्युत नियामक आयोग में सेवानिवृत न्यायधीश को अध्यक्ष बनाया गया है जबकि नियामक प्राधिकरण में सभी नौकरशाह शामिल है। 2003 में पारित केन्द्रीय विद्युत अधिनियम के विरूद्ध महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के कानून में सामाजिक समूहों और आम जनता के हस्तक्षेप के लिए कोई जगह नहीं है। यह बड़ी खामी है। महाराष्ट्र जल नियामक आयोग के कानून में पारदर्शिता और जनसहभागिता के लिए पर्याप्त प्रावधान न होने के कारण नियामक आयोग को जिम्मेदार ठहराना मुश्किल है। नियामक आयोग के व्यापक अधिकारों के कारण महाराष्ट्र के जलक्षेत्र में इसके गंभीर और दूरगामी परिणाम होंगें। महाराष्ट्र के नियामक तंत्र को कई राज्य आदर्श के रूप में देखते हैं इसलिए इस तंत्र के ढाँचे और स्वरूप का पर्याप्त विश्लेषण जरूरी है।

- महाराष्ट्र के कानून से भविष्य में जल क्षेत्र की निर्णय प्रक्रिया नौकरशाहों के हाथों में केन्द्रित हो जाने की आशंका है। सवाल यह है कि क्या नौकरशाहों और तकनीकशाहों से बना नियामक तंत्र स्वायत्त हो भी सकता है?
- जल नियामक आयोग को अनेक ऐसे अधिकार सौंपे गए हैं जो किसी लोकतांत्रिक तरीके से निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के होते हैं। लेकिन नियामक को जनप्रतिनिधियों और आम जनता के प्रति जवाबदेह बनाने का कोई प्रावधान नहीं है। यह जनतांत्रिक निर्णय प्रक्रिया के खिलाफ है।
- जल नियामक आयोग को सौंपे गए कामों का स्वरूप बहुत ही व्यापक और संवेदनशील है। इसे विभिन्न प्रकार के काम सौंपे गए हैं। तीन लोगों की तकनीकी और आर्थिक विशेषज्ञता इसके लिए पर्याप्त नहीं है।

- जल नियामक आयोग जैसी प्रशासनिक अधिकारियों के समूह को अर्ध न्यायायिक भूमिका सौंप दी गई है। इस तंत्र को अर्ध न्यायिक कार्यप्रणाली का पुर्वानुभव नहीं होता है जिससे जलक्षेत्र की व्यवस्था पर इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं।
- स्वायत्त नियामक आयोग का कानून अमेरिका में उन्नीसवीं सदी में बना। अधिकांश विकासशील देशों द्वारा इस कानून को अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के दबाव में स्वीकारा गया। विकासशील देशों नें इन वित्तीय एजेंसियों से कर्ज पाने के लिए और निजी निवेशकों को निर्णय प्रक्रिया के निष्पक्ष होने का विश्वास दिलाने के लिए एक शर्त के रूप में इसे स्वीकारा है। इसी कारण पारदर्शी प्रक्रिया और आयोग को जवाबदेह ठहराने जैसे प्रावधान हाँशिए पर रखे गए। विशिष्ट सामाजिक, आर्थिक परिस्थिति और नागरिक समुदाय का स्वरूप जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों की भी अनदेखी की गई।

चूँकि मध्यप्रदेश में जलनियामक आयोग अभी गठित नहीं हुआ है, इसलिए स्थानीय समुदाय एवं समूहों के लिए मौका है कि वे जलक्षेत्र के लिए उचित नियमन प्रारूप पर विचार करें। पानी का विकेन्द्रीकृत स्वरूप, जल क्षेत्र में स्थापित हितसंबंध और आर्थिक विकास की प्रक्रिया में पानी की अहम भूमिका को देखते हुए इस क्षेत्र का नियमन बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाता है। स्वतंत्रता के बाद भारत में जलक्षेत्र का विकास जिस प्रकार से हुआ उससे राज्य निययंत्रित प्रारूप की कई खामियाँ सामने आई है। इन खामियों पर विचार जरूरी है। लेकिन इस समय इस बात पर बहस जरूरी है कि इस परिस्थिति में क्या 'स्वायत्त नियामक आयोग का प्रारूप सर्वोत्तम विकल्प है?

●●●

10

महाराष्ट्र जल नियामक आयोग के अनुभव और सीख

मध्यप्रदेश के जल नियामक आयोग के संभावित परिणामों को समझने के लिए महाराष्ट्र के अनुभवों से सीखना महत्वपूर्ण होगा। पहले हम महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के अधिकारों पर नज़र डालें -

- जल अधिकार सुनिश्चित करना। यहाँ जल अधिकार का अर्थ "जल उपयोग के अधिकार" के समान है। जिसे तकनीकी भाषा में एनटायटलमेंट (Entitlement) कहा जाता है।
- जल दर निर्धारित करना
- जल संसाधन परियोजनाओं की समीक्षा एवं स्वीकृति

इन अधिकारों के संदर्भ में नियामक आयोग का कार्य कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लेना और विवाद निराकरण करना है। इन अधिकारों को मूर्त रूप देने के लिए नियामक प्राधिकरण को दीवानी न्यायालय के अधिकार प्राप्त है। इस प्रकार यह अर्ध न्यायिक संस्था हैं

मध्यप्रदेश के प्रस्तावित जल नियामक आयोग और महाराष्ट्र के नियामक प्राधिकरण में एक अंतर है। महाराष्ट्र जल नियमन प्राधिकरण को जल अधिकार, जल दर निर्धारण और जल परियोजनाओं पर निर्णय लेने के अधिकार है। मध्यप्रदेश का आयोग सिर्फ जल दर के नियमन तक सीमित है। लेकिन केन्द्रीय योजना आयोग की रिपोर्ट के मुताबिक महाराष्ट्र के आयोग की तर्ज पर अन्य राज्यों में भी नियामक तंत्र स्थापित किए जाने का सुझाव है। चूँकि महाराष्ट्र जल नियमन प्राधिकरण देश का पहला जल नियामक आयोग है इसलिए इसे आदर्श के रूप में देखा जाएगा और मध्यप्रदेश सहित अन्य राज्यों में भी ऐसे व्यापक अधिकार सम्पन्न आयोग बनाए जा सकते हैं।

विश्व बैंक की शर्त के अनुसार मध्यप्रदेश में राज्य जल संसाधन एजेंसी या स्वारा (State Water Resource Agency or SWaRA) का गठन किया जा चुका है। विश्व बैंक के परियोजना मूल्यांकन दस्तावेज के अनुसार इस एजेंसी को जल संसाधन आवंटन का अधिकार भी दिया जाना है। स्वारा द्वारा जल आवंटन में बाजार के सिद्धांतों का उपयोग किया जाएगा। इसलिए जल दर के साथ जल अधिकार और आवंटन को भी समझना जरूरी है।

नियामक के अधिकार

जल अधिकार

इसके तहत जल अधिकार (जल उपयोग के अधिकार) सुनिश्चित करना शामिल है। इन जल अधिकारों की व्यवस्था, क्रियांवयन, निगरानी, नाप-तौल निर्धारित करने की जिम्मेदारी भी नियामक आयोग की ही है। इसके प्रावधान के प्रमुख सिद्धान्त निम्न है -

- **समानता –** इससे प्रतीत होता है कि हर किसी को समान जल अधिकार होगा। लेकिन कानून में समानता का अर्थ दिया है - "हर जमीन मालिक को अपनी जमीन के रकबे के अनुपात में जल अधिकार का आवंटन"। यानी जिसके पास जयादा जमीन उसको ज्यादा पानी के अधिकार।
- **अधिकारों का बाजार बनाने की छूट –** ये अधिकार वास्तव में जल क्षेत्र को बाजार व्यवस्था में परिवर्तित करने की ही एक प्रक्रिया है। नियामक आयोग को जल अधिकारों की खरीदी, बिक्री, हस्तांतरण आदि गतिविधियों में नियमन का अधिकार दिया गया है।
- **नहर में जल वितरण अंतिम छोर से –** यह प्रावधान उपयुक्त हो सकता है।

परिणाम

- जल अधिकारों संबंधी प्रावधान बहुत ही गंभीर स्वरूप के बदलाव लाने वाले होंगें।
- ये प्रावधान जल संसाधन को बाजार व्यवस्था से जोड़ने का काम करेंगें।
- नियामक प्राधिकरण के अस्तित्व में आने के बाद सरकार की भूमिका तो कम हो ही गई है। आगे चलकर जब जल अधिकारों का बाजार स्थापित होगा तब बाजार ही सारी व्यवस्थाओं का नियमन और नियंत्रण करेगा

जल दर निर्धारण

नियामक आयोग के अधिकारों में विभिन्न क्षेत्रों (जैसे सिंचाई/खेती, औद्योगिक, घरेलू, पर्यावरण मनोरंजन) में जल अधिकारों का आवंटन और व्यक्तिगत अधिकारों के आवंटन की अनुशंसा करना शामिल है। इसके तहत थोक जल दरों का निर्धारण करना, दर निर्धारण का तरीका निर्धारित करना और प्रत्येक 3 वर्षों में दरों की समीक्षा करना शामिल है। इसके सिद्धांत निम्न है -

- व्यवस्थापन खर्च के साथ संचालन और संधारण की वसूली।
- जल नियामक कानून के तहत व्यवस्थापन, संचालन और संधारण खर्च की वसूली का उल्लेख है। लेकिन महाराष्ट्र की जल नीति में पूर्ण लागत वसूली को स्वीकार कर लिया गया है। इसलिए संभावना है आगे चलकर पूर्ण लागत वसूली का सिद्धांत कानून में भी स्वीकार कर लिया जाए।
- जिन किसानों के 2 से अधिक बच्चे हों उन्हें डेढ़ गुना अधिक भाव पर पानी देना।

- जल दर वहन करने की क्षमता न होने पर सब्सिडी।
- प्रदूषणकर्ता पर आर्थिक अधिभार आरोपित करना।

परिणाम

- मोटे तौर पर इस व्यवस्था से जल दरें बढ़ेंगी।
- विरोध को कम करने हेतु सब्सिडी का दिखावा किया गया है लेकिन पिछले अनुभवों से स्पष्ट है कि समय के साथ सब्सिडी को खत्म कर दिया जाता है।
- पानी को बाजार व्यवस्था में प्रवेश करवाने और पूर्ण लागत वसूली के सिद्धांत से पानी महँगा होगा और गरीब के हाथ से पानी निकल जाएगा।

जल संसाधन परियोजनाओं के बारे में अधिकार

जल नियामक आयोग को परियोजनाओं की समीक्षा और उनकी स्वीकृति के बारे में निर्णय लेने का अधिकार है। इसके तहत निम्न बातों पर विचार किया जाएगा -

- राज्य के जलनियोजन को ध्यान में रखना
- आर्थिक, जल विज्ञान और पर्यावरण की दृष्टि से परियोजनाओं की पड़ताल
- सिंचाई संबंधी क्षेत्रीय संतुलन को ध्यान में रखना।

सिंचाई परियोजना के निजीकरण में जल नियामक आयोग के हस्तक्षेप का अनुभव

महाराष्ट्र में नीरा-देवघर नामक पहली जल संसाधन परियोजना के निजीकरण की प्रक्रिया जारी है। इस निर्माणाधीन सिंचाई परियोजना के निजीकरण की प्रक्रिया की पृष्ठभूमि में जाएँ तो पता चलता है कि महाराष्ट्र में कोई 1300 परियोजनाएँ अधूरी पड़ी है, जिनसे 34 लाख हेक्टर में सिंचाई हो सकती है। इन परियोजनाओं को पूरा करने हेतु 41 हजार करोड़ की लागत आएगी। इस संबंध में सरकार का दावा है कि सरकारी बजट से इन परियोजनाओ को पूरा करने में 90 वर्ष लग सकते हैं। इसलिए सरकार ने बनाओं, चलाओं और हस्तांतरित करों (Build, Operate, Transfer) अनुबंध के माध्यम से परियोजनाओं के निजीकरण की तरकीब निकाली है। पिछले वर्ष सितंबर 2007 में नीरा-देवघर परियोजना के अभिरूचि आमंत्रण (Expression of Interest) जारी कर महाराष्ट्र में जल संसाधन परियोजनाओं के निजीकरण की औपचारिक शुरूआत की जा चुकी है।

चूँकि जल नियामक प्राधिकरण एक अर्द्ध न्यायिक संस्था है इसलिए हमारा मानना है कि जनहित से जुड़े मामलों में नियामक प्राधिकरण को हस्तक्षेप करना चाहिए। इसलिए हमने नीरा-देवघर परियोजना के निजीकरण के खिलाफ महाराष्ट्र जल नियामक प्राधिकरण के समक्ष एक जनहित याचिका दायर कर कर

समाज के व्यापक हित में इसकी समीक्षा की माँग की है। इस याचिका प्रक्रिया के दौरान अध्ययन और अनुभव से निम्न स्पष्टताएँ हुई -

1. **निजीकरण में नियामक प्रक्रिया का विरोध** - निजीकरण की प्रक्रिया में नियामक आयोग के हस्तक्षेप का सरकार ने विरोध किया है। इसका अर्थ है कि जिस प्रक्रिया से पानी की व्यवस्था सरकार के हाथों से निजी कंपनियों के हाथों में जा रही है उसमें सरकार को नियमन बर्दाश्त नहीं है। इसीलिए निजीकरण की प्रक्रिया शुरू करते समय नियमन कानून को नज़रअंदाज किया गया। लेकिन दुःख की बात है कि नियामक प्राधिकरण ने भी जल संसाधनों के निजीकरण में खुद की भूमिका का कोई विचार नहीं किया।

2. **निजीकरण संबंधी प्रावधानों पर जोर** - जल नियामक कानून के सिर्फ उन प्रावधानों का ही उपयोग किया गया जो निजीकरण के पक्ष में हैं। कुछ उदाहरण -
   - जल अधिकारों का आवंटन नियामक प्राधिकरण के माध्यम से बाजार के सिद्धांतों के तहत
   - जल अधिकारों का बाजार बनाने का अर्थ होगा-निजी कंपनियों को जल दरों की वसूली के अलावा खेती आधारित उद्योग जैसे अन्य तरीकों से भी मुनाफा कमाने की छूट
   - जल दर निर्धारण के सिद्धांत भी निजीकरण के पक्ष में
   - जल अधिकारों के निर्धारण में जनसहभगिता का कोई प्रावधान नहीं होने से आशंका है कि निजीकरण समर्थक समूह दबाव समूह बनाकर जल अधिकार निर्धारण प्रक्रिया को प्रभावित कर सकते हैं।

3. **नियमन कानून के अंतर्विरोध** - राज्य की जल नीति और नियमन कानून में कुछ अंतर्विरोध दिखाई दे रहे हैं। जल नीति पूरी लागत वसूली की बात करती है जबकि नियमन कानून में ''संचालन एवं संधारण खर्च'' का ही उल्लेख है। हालांकि इससे निजीकरण की प्रक्रिया में बाधा आ सकती है। लेकिन इस प्रावधान के नुकसान भी है। नियमन कानून का यह प्रावधान बड़े औद्योगिक उपभोक्ताओं के लिए फायदेमंद है क्योंकि उन्हें लागत का भार नहीं उठाना पड़ेगा।

4. **व्यवहार्यता अंतर फण्डिंग** - निजी कंपनियों को पर्याप्त मुनाफा नहीं होने पर व्यवहार्यता अंतर फण्डिंग (Viability Gap Funding) को प्रावधान का प्रचार निजीकरण के समर्थकों/सरकार द्वारा किया गया है। इससे जो परियोजनाएँ निजीकरण की दृष्टि से व्यवहार्य नहीं है उन्हें सार्वजनिक संसाधनों से व्यवहार्य बनाने का प्रयास किया गया है। ऐसे में सवाल उठता है कि निजी कंपनियों के मुनाफे के लिए सार्वजनिक संसाधनों का उपयोग क्यों?

5. **नियामक प्राधिकरण के सदस्यों पर राजनैतिक प्रभाव** – स्वायत्त नियामक प्राधिकरण को राजनैतिक दलों और व्यक्तियों के प्रभाव से परे और जनहित केन्द्रित होना चाहिए। लेकिन नियामक प्राधिकरण की स्वायत्त हैसियत पर ही प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है क्योंकि इस प्राधिकरण के सदस्यों पर राजनैतिक प्रभाव है। अपने गठन के ढाई-तीन सालों बाद भी नियामक प्राधिकरण ने जनहित में कोई ठोस कार्य नहीं किया है। यहाँ तक कि नियामक प्राधिकरण को नज़रअंदाज़ करते हुए नीरा-देवघर परियोजना निजी क्षेत्र को सौंपने का निर्णय भी राज्य सरकार द्वारा खुद ही ले लिया गया। लेकिन, दु:ख की बात है कि इस मामले में प्राधिकरण भी मूकदर्शक ही बना रहा। लगता है, इस बात का निर्णय ले लिया जा चुका है कि प्रभावशाली लोगों के हितों पर चोट न की जाए, नियामक प्राधिकरण को निजीकरण की प्रक्रिया से बाहर रखा जाए और जिन प्रावधानों से निजीक्षेत्रों के हित जुड़े हैं उन प्रावधानों का उपयोग अनुकूल परिस्थिति आते ही तुरन्त कर लिया जाए।

6. **नियामक प्रक्रिया में सामाजिक हस्तक्षेप का विरोध** – नियामक कानून में जनसहभागिता और पारदर्शिता का कोई प्रावधान ही नहीं है। दूसरी ओर, निजीकरण के समर्थकों को न तो नियामक प्रक्रिया में कोई जनभागीदारी पसन्द है और न ही नियामक तंत्र का निजीकरण की प्रक्रिया में हस्तक्षेप। इस प्रकार दोनों ही स्तरों पर समाज/सामाजिक समूहों को इस प्रक्रिया से अलग रखने की कोशिश की गई है।

सीख

जल नियामक कानून और निजीकरण की प्रक्रिया में हस्तक्षेप से निम्न निष्कर्ष सामने आए हैं -

i. जल नियामक कानून के जल अधिकार और जल दर निर्धारण के प्रावधानों से पानी पर निजी कंपनियों, उद्योग समूहों और बाजार की ताकतों का कब्जा हो जाएगा

ii. जिन स्थानों पर लोगों के जल संसाधनों पर अधिकार स्थापित नहीं हो पाए हैं (जैसे अधूरी और नई परियोजनाएँ) और जहाँ पर ऐसे अधिकार स्थापित होना कठिन है वहाँ पर बाजार की ताकतों का कब्जा ज्यादा होगा और समुदाय वंचित रहेगा।

iii. नियामक तंत्र का उपयोग जल संसाधनों पर कब्जे को कानूनी जामा पहनाने में किया जाएगा।

चूँकि मध्यप्रदेश में नियामक कानून प्रस्तावित है अत: उपरोक्त परिस्थितियों से सीख लेकर मध्यप्रदेश में भी जल नियामक आयोग का विरोध किया जाना जरूरी है।

●●●

मंथन अध्ययन केन्द्र

'मंथन अध्ययन केन्द्र' ऊर्जा, बिजली तथा पानी से जुड़े मुद्दों का अध्ययन, विश्लेषण तथा इन क्षेत्रों की गतिविधियों का सतत् आंकलन करता है। वैश्वीकरण और निजीकरण के चलते इन क्षेत्रों में हो रहे बदलावों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। अध्ययन मुख्यत: पानी और उर्जा के सवालों पर केन्द्रित होकर समता, न्याय और स्थाई विकास के संदर्भ में है।

'मंथन' द्वारा वैश्वीकरण-निजीकरण की प्रक्रिया, सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की बदलती भूमिका, बदलते कानूनी ढाँचों से बदले परिवेश में पानी, ऊर्जा, बड़े बाँध, निजीकरण तथा इन क्षेत्रों के विकल्पों पर अध्ययन जारी है। मंथन के पास इन मुद्दों से संबंधित दस्तावेज, पुस्तकें, अखबारों की कतरनें, पत्रिकाएँ आदि उपलब्ध हैं। 'मंथन' विभिन्न संघर्षों, जन आंदोलनों, सामाजिक संस्थाओं, अध्ययन केन्द्रों आदि के साथ निकट और जीवंत संपर्क बनाएं हुए है।

संपर्क :
मंथन अध्ययन केन्द्र, दशहरा मैदान रोड़ बड़वानी (म०प्र०) - 451 551
फोन: 07290–222857 ईमैल: manthan .kendra@gmail.com वेब: www. manthan-india.org

संसाधन और जीविका समूह, प्रयास

प्रयास का 'संसाधन और जीविका' समूह पुणे में (महाराष्ट्र) सन २००० से कार्यरत है। यह समूह शाश्वत तथा सुरक्षित जीविका, तथा, जनकेंद्री शासन इन दोनों दृष्टिकोनोंके आधारपर ग्रामीण-विकासके बारेंमे सरकारकी नीती एवं जुडे हुए मुद्दोंका अध्ययन, विश्लेषण, प्रबोधन तथा जनवकालत की गतिविधियोंमे व्यस्त है।

इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण गतीविधीया इस तरह : शाश्वत-जीविका तथा जनकेंद्री शासन की संकल्पना पर आधारित विकास-दृष्टिकोन की रचना और प्रसार; गाँवस्तरपर काम करनेवाले गुटोंके काम को मददगार हो ऐसे प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शक साधनोंका विकसन, जैसे की: सहभागी अभ्यास एवं अनुसंधानके आधारपर गाँव का सुरक्षित जीविका घोषणा-पत्र बनानेकी पद्धती, वंचित घटकोंके लिए शाश्वत खेती के प्रयोग, पथदर्शन तथा प्रशिक्षण; गरीबीरेखा सर्वेक्षणपद्धतीकी चिकित्सा इ. साथ साथ आदिवासी विकासनीती, आपदा व्यवस्थापन, रोजगार गारंटी कानून इन विषयोंपर विश्लेषण-अध्ययन, जनप्रबोधन तथा जनवकालत भी गतिविधियोंमे शामिल है।

महाराष्ट्र में सन २००५ में जलक्षेत्र के नियमन के लिए 'नियामक प्राधिकरण' स्थापित करनेवाला कानून

करीब दो दशकों से भारतीय अर्थव्यवस्था में उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई है। लेकिन जल क्षेत्र में 'सुधार' हाल के वर्षों में प्रारंभ हुए है।

इन नीतिगत बदलावों का एक तरीका जल सेवाओं का सीधा निजीकरण, बीओटी अथवा प्रबंधन अनुबंध है। इसी के तहत दिल्ली जल निगम और के० ईस्ट वार्ड (मुंबई) के निजीकरण के प्रयास असफल हो चुके हैं। नागपुर के धरमपेठ झोन और तिरूपुर (तमिलनाडु) में निजीकृत जल प्रदाय के प्रयास जारी है। साथ ही, जनविरोध के बावजूद अलियान दुहांगन (हिमाचल प्रदेश) और महेश्वर जल विद्युत परियोजना (म०प्र०) जैसी निजीकृत परियोजनाओं को आगे बढ़ाया जा रहा है।

दूसरे तरीके में, विश्व बैंक और अन्य अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियाँ कर्जों के साथ ऐसी शर्ते रख रही है जिससे पूरा क्षेत्र बाजार में तब्दील हो रहा है। महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश में ऐसे ही कर्जों की शर्तों के तहत या तो जल नियामक आयोग बन चुके हैं या फिर बनने वाले हैं। वर्तमान में जारी पानी के निजीकरण की नीति हमें विचार करने को मजबूर करती है।

पुस्तिका में क्षेत्र सुधार कार्यक्रम के तहत जलक्षेत्र में हो रहे बदलावों की प्रक्रिया पर तथ्यपरक सामग्री के साथ समुदायों पर इसके प्रभावों के शब्दचित्र प्रस्तुत किए गए हैं।